बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 89

पारदर्शिता हो प्राथमिकता

अठारहवीं लोक सभा के लिए मतदान इस हफ्ते खत्म हो जाएगा और नतीजे 4 जून को आएंगे। इसके बाद केंद्र में नई सरकार के गठन का रास्ता साफ हो जाएगा। अगली सरकार किसी भी राजनीतिक दल या गठबंधन की क्यों न हो, उसे तत्काल अपना काम शुरू करना होगा और नीतिगत तथा प्रशासन संबंधी चुनौतियों से निपटना होगा। ऐसा ही एक मसला चुनावों से ही जुड़ा है। फरवरी में सर्वोच्च न्यायालय के एक संवैधानिक पीठ ने चुनावी बॉन्ड योजना को रद्द कर दिया क्योंकि यह संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) के तहत मिले सूचना के अधिकार का उल्लंघन करती थी। सर्वोच्च न्यायालय ने इन बॉन्डों को जारी करने के लिए अधिकृत भारतीय स्टेट बैंक को यह निर्देश भी दिया कि वह इनके जरिये मिले चंदे का ब्योरा सार्वजनिक करे, जिसके बाद इनका मीडिया और अन्य जगहों पर गहराई से विश्लेषण किया गया। भारत में चुनावों की फंडिंग हमेशा से ही चिंता का विषय रही है और सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय ने राजनीतिक पार्टियों को मिल रहे धन के बारे में सभी मसलों के समाधान का एक अवसर प्रदान किया है। केंद्रीय गृह मंत्री ने हाल में एक साक्षात्कार में इस बात पर जोर दिया कि चुनावी बॉन्ड योजना का कोई विकल्प लाना होगा। भारतीय राजनीति में काले धन या आमतौर पर धनबल का इस्तेमाल बड़ी चिंता का विषय रहा है और अगली सरकार को इस समस्या का तत्काल समाधान करना चाहिए। लेकिन जो भी विकल्प अपनाया जाए, उसे चुनावी बॉन्ड योजना को रद्द करने की बुनियादी वजहों का समाधान करना होगा। इस संबंध में अगली सरकार एक समिति बना सकती है जिसमें सभी राजनीतिक दलों के सदस्य हों। यह समिति राजनीतिक फंडिंग के सभी पहलुओं का अध्ययन करे और उसके बाद अपने सुझाव दे, जिन पर अमल से पहले इसके बारे संसद में गहन चर्चा होनी चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की पृष्ठभूमि में किसी भी वैकल्पिक प्रणाली का शुरुआती बिंदु पारदर्शिता होनी चाहिए। अगर राजनीतिक दलों को मिलने वाले चंदे के लिए अपारदर्शी व्यवस्था अपनाई गई तो इसका कई तरह का बुरा असर हो सकता है, जिनमें नीतियों पर दबदबा शामिल है। इसके अलावा, चूंकि विचार काले धन के असर को समाप्त करने का है, इसलिए नई प्रणाली में नकद चंदे की व्यवस्था खत्म होनी चाहिए। भुगतान समाधान में तो भारत दुनिया का अगुआ बन चुका है, यूनिफाइड पेमेंट इंटरफेस काफी लोकप्रिय हुआ है, ऐसे में इसमें कोई समस्या नहीं आनी चाहिए। समिति को इस पर भी विचार करना होगा कि निर्वाचन आयोग को किस तरह से मजबूत बनाया जाए ताकि यह राजनीतिक दलों की आय और खर्च पर सख्ती से निगरानी रख सके। अक्सर यह सुझाव दिया जाता है कि चुनाव या राजनीतिक दल सरकारी खर्च पर चलें ताकि काले धन और धनबल का असर रोका जा सके और सबको बराबरी का मौका मिले। लेकिन यह तभी कारगर हो सकता है, जब राजनीतिक दलों को मिलने वाले धन की समुचित निगरानी हो और पार्टियों की किसी अन्य स्रोत से धन उगाही पर रोक लगाई जाए।

एक विकल्प यह भी हो सकता है कि एक ऐसा राष्ट्रीय कोष बनाया जाए जिसमें सभी नागरिक और कंपनियां योगदान करें। इस तरह से जुटाए गए कोष को सभी राजनीतिक दलों में इस तरह से वितरित किया जा सकता है कि सबको बराबरी का मौका मिले। इससे बदला लेने का डर भी खत्म हो जाएगा जिसे कि अक्सर राजनीतिक फंडिग में पारदर्शिता न होने के बहाने के रूप में पेश किया जाता है। समिति यह भी देख सकती है कि राजनीतिक दल पैसा खर्च किस तरह से करते हैं। उदाहरण के लिए, चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के लिए खर्च की सीमा तो तय की गई है, लेकिन राजनीतिक दलों के लिए नहीं, जो कि एक प्रतिस्पर्धी लोकतंत्र में संतुलन को प्रभावित कर सकता है। यह कहना सही होगा कि राजनीतिक दलों के वित्त का मामला जटिल है और इसका कोई आसान समाधान नहीं है। हालांकि, अब जब अदालत के एक आदेश से मौजूदा प्रणाली रद्द हो गई है और नई लोक सभा का गठन होने जा रहा है, भारत के सामने यह अवसर है कि वह जहां तक संभव है चीजों को दुरुस्त कर सके।

छिपे हुए कानून का बंद हो चलन

कारोबार सुगमता और कानूनों की लोकतांत्रिक वैधता सुनिश्चित करने के लिए सर्कुलर की सख्ती खत्म होनी चाहिए। बता रहे हैं एम एस साहू और सुमित अग्रवाल

बंबई उच्च न्यायालय ने इस साल 4 अप्रैल को अपने एक फैसले में भारतीय दिवाला एवं शोध अक्षमता बोर्ड (आईबीबीआई) द्वारा जारी एक परिपत्र (सर्कुलर) की कुछ धाराओं को खत्म कर दिया। अदालत का कहना था कि कानूनी नियम वाली ये धाराएं, भुगतान प्रक्रिया नियमन से परे हैं। हालांकि इसमें कहा गया कि आईबीबीआई के लिए यह भी व्यावहारिक होगा कि यह विधायी प्रक्रिया का पालन करते हुए इन्हीं धाराओं की सामग्री में संशोधन का प्रस्ताव कर सकता है लेकिन इसके लिए नियमन बनाने की पूरी प्रक्रिया पर अमल करना होगा।

दूसरा मामला, कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा 10 अप्रैल, 2024 के आदेश में केंद्र सरकार द्वारा जारी एक परिपत्र पर रोक लगाने से जुड़ा है जिसके तहत कुत्तों की 'आक्रामक नस्ल' पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया गया था। अदालत ने कहा कि यह परिपत्र नियमों से अधिक सख्त था। हालांकि, अदालत ने यह भी कहा कि केंद्र सरकार कानून की उचित प्रक्रिया का पालन करते हुए नियमों में संशोधन कर सकती है। हाल के दो अदालती फैसलों से यह बात स्पष्ट हुई है कि कोई परिपत्र किसी नियम/नियमन की जगह नहीं ले सकता है जो ऐसे उपकरण हैं जिनके माध्यम से अधिकारी कानूनी नियमों के बारे में बता सकते हैं यानी सरकारी विभाग या कंपनी के बोर्ड सिर्फ दिशानिर्देश जारी कर कानूनी नियम नहीं बना सकते।

करीब एक साल पहले प्रतिभूति अपील न्यायाधिकरण ने भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) के एक आदेश को खारिज कर दिया। न्यायाधिकरण ने कहा कि प्रतिभूति को जमानत पर रखे जाने से जुड़े परिपत्र पर यह आदेश पर आधारित था जो उस मामले पर लागू नहीं होता था। न्यायाधिकरण ने यह भी स्पष्ट किया कि परिपत्र सिर्फ उन्हीं लोगों के लिए होता है जिनके लिए वह जारी किया जाता है। बाकी पर इस परिपत्र पर अमल करने का कोई दायित्व नहीं होता है, भले ही वह उसी परिपत्र से जुड़े लोगों के साथ और उनके लिए ही क्यों न काम कर रहे हों। अगर उस परिपत्र के प्रावधानों को नियमन के रूप में पेश किया जाता तब शायद यह आदेश सही ठहरता। शीर्ष अदालत पहले से भी इस बात को कहती रही है कि कानूनी नियम तय करने के लिए सिर्फ परिपत्र काफी नहीं होते। परिपत्र सिर्फ यह बताता है कि कानून बनाने वाले संस्थान किसी खास कानून को कैसे समझते हैं। अगर यह गलत या मौजूदा कानून के विरुद्ध है तो उस परिपत्र को कोई कानूनी मान्यता नहीं मिलती है। हालांकि, अगर कोई गलत परिपत्र लोगों के फायदे के लिए बनाया गया है तो वह सिर्फ उसी संस्थान पर लागू होगा जिसने वह परिपत्र जारी किया है। इसलिए, ज्यादातर कानून ये नहीं मानते कि कानूनी नियम सिर्फ परिपत्र जारी करके बनाए जा सकते हैं।

कानूनी नियम तय करने के लिए दो तरह के कानून बनाने की प्रक्रिया है। प्राथमिक कानून और द्वितीयक/अधीनस्थ कानून। प्राथमिक कानून विधायिका द्वारा बनाया जाता है जबकि द्वितीयक कानून प्राथमिक कानून के अधीन होते हैं और इन्हें कार्यपालिका (सरकार नियम बनाती है और नियामक संस्थाएं नियमन करती हैं) विधायिका के प्रतिनिधि के तौर पर बनाती है। हालांकि राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कई छिपे हुए कानून (जो कानून के रूप में औपचारिक रूप से पारित नहीं किए जाते हैं, लेकिन फिर भी कानूनी रूप से बाध्यकारी होते हैं) उभरे हैं जिसे अफसरशाही व्यवस्था (आमतौर पर वरिष्ठ अधिकारी द्वारा) द्वारा बनाया जाता है ताकि कानूनी नियमों में सेंध लगाई जा सके। ये कई तरह के स्वरूप में नजर आते हैं जैसे कि निर्धारण, दिशा, निर्देश, आदेश, व्यवस्था, योजना, रणनीति, दिशानिर्देश, संहिता, मानक, प्रोटोकॉल, अधिसूचना, नोटिस घोषणा, अग्रिम नियम, स्पष्टीकरण, प्रेस विज्ञप्ति, आदि।

वहीं भारतीय संदर्भ में अधीनस्थ कानून को कई प्रक्रियात्मक और सारभूत सुरक्षा उपायों से गुजरना पड़ता ताकि अनिर्वाचित लोगों द्वारा बनाए गए कानून की लोकतांत्रिक वैधता सुनिश्चित की जा सके। मिसाल के तौर पर नियमन को ही लें। (क) प्राथमिक कानून यह तय करता है कि नियम किस विषय और उद्देश्य के लिए बनाए जा सकते हैं, (ख) यह बताता है कि सिर्फ नियामक संस्था का प्रशासित बोर्ड ही नियम बना सकता है और यह कभी-कभी केंद्र सरकार की पूर्व स्वीकृति के साथ ऐसा किया जा सकता है। (ग) प्रस्तावित नियमों पर सार्वजनिक परामर्श की आवश्यकता होती है और साथ ही प्रस्ताव के संभावित असर का आकलन पहले ही करना जरूरी होता है (घ) इसके लिए राजपत्रित अधिसूचना जारी करने की जरूरत होती है ताकि सभी को नियमों की जानकारी हो (ड.) इस कानून के तहत बनने वाले नियमों की संसद में जांच की जा सकती है, ये सभी चीजें छिपे हुए कानून पर लागू नहीं होते हैं। ऐसे में एक सर्कुलर जारी कर यह नियम बनाया जा सकता है जिसमें यह कहा जाएगा कि बाजार में जाने वाले लोगों को मंगलवार को लाल टोपी नहीं पहननी चाहिए!

प्राथमिक कानून सिर्फ नियमन के जरिये ही कानून बनाने की परिकल्पना करता है। यह नियामक को नियम बनाने का अधिकार किसी और को देने से रोकता है। हालांकि, छिपे हुए कानून का इस्तेमाल करने पर कोई स्पष्ट रोक नहीं है, भले ही कानून इसे मान्यता नहीं देता है। कानून बनाने की प्रक्रिया की सख्ती का संबंध उस कानून की लोकतांत्रिक वैधता से सीधे तौर पर जुड़ा है। प्राथमिक कानून बनाने की प्रक्रिया सबसे सख्त होती है, इसलिए इसे सबसे अधिक वैध माना जाता है। अधीनस्थ कानून की वैधता उससे थोड़ी कम होती है। छिपे हुए कानूनों की वैधता सबसे कम होती है क्योंकि ये सख्त जांच-पड़ताल की प्रक्रिया से नहीं गुजरते हैं। शायद इसीलिए प्रशासन कानूनी नियम बनाने के लिए अधीनस्थ कानून के बजाय छिपे हुए कानून का सहारा लेता है, भले ही उनकी कानूनी वैधता संदिग्ध हो।

बाजारों से जुड़े अधीनस्थ कानूनों का दायरा प्राथमिक कानून से कहीं ज्यादा व्यापक है। छिपे हुए कानूनों की तादाद, प्राथमिक और अधीनस्थ कानून दोनों को मिलाकर देखने के मुकाबले भी ज्यादा है। यह विधायिका से कार्यपालिका और कार्यपालिका से नौकरशाही तक सत्ता के संतुलन में बदलाव को दर्शाता है।

इसी वजह से दुनिया भर में इस बात की मांग हो रही है कि सत्ता का संतुलन फिर से विधायिका में समाहित किया जाए और अधीनस्थ कानूनों पर निर्भरता कम की जाए। इसके अलावा यह भी मांग की जा रही है कि छिपे हुए कानूनों पर पूरी तरह से रोक लगाई जाए, सिवाय कोविड-19 जैसी आपात स्थितियों को छोड़कर।

ब्रिटेन के हाउस ऑफ लॉर्ड्स की दो प्रवर समितियों ने नवंबर 2021 में दो रिपोर्टों में इस बारे में चिंता जताई थी कि कैसे अधीनस्थ और छिपे हुए कानून प्रभावी तरीके से विधायिका को दरकिनार कर रहे हैं। संसद को वापस सारी शक्तियां देने की बात करने के साथ ही दे देनी चाहिए। उन्होंने यह भी चिंता जताई कि अगर किसी प्रतिनिधिमंडल-कार्यपालिका समूह को कानून बनाने का अधिकार दिया जाता है तो यह जनता के प्रति जवाबदेही के सिद्धांत को और भी ज्यादा कमजोर कर देगा। सीधे तौर पर सरकार को कुछ छोटे कानून बनाने का अधिकार देना, उस समूह को ज्यादा ताकत देने से बेहतर है।

परिपत्र का समर्थन अक्सर इस वजह से दिया जाता है कि किसी आपात स्थिति से निपटने के लिए कार्यपालिका को तुरंत हस्तक्षेप करने की जरूरत पड़ सकती है। कार्यपालिका को सीमित समय के लिए आपातकालीन अधीनस्थ कानून जारी करने का अधिकार दिया जा सकता है, जिन्हें नियम बनाने की सामान्य प्रक्रिया का पालन किए बिना भी लागू किया जा सकता है। हालांकि, इसका मतलब ये नहीं है कि सर्कुलर जैसे दिशानिर्देश की कोई जरूरत नहीं है। कानूनी नियम बनाने के बजाय, इनका इस्तेमाल नियमों को लागू करने और उनका पालन करने में आसानी लाने के लिए किया जा सकता है।

यह सही वक्त है जब संसद किसी भी तरह के छिपे हुए कानून पर पूरी तरह से रोक लगा दे। कार्यपालिका और नियामक संस्थाओं को भी निर्देश दिए जाने चाहिए कि अब से सिर्फ अधीनस्थ कानून के जरिये ही कानूनी नियम तय किए जाएं। अगर कोई मौजूदा छिपा हुआ कानून प्रासंगिक है तब उसे उचित प्रक्रिया का पालन करते हुए नियमों में बदला जाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता है तब एक निश्चित समय सीमा के अंदर उन्हें वापस ले लेना चाहिए। परिपत्र राज को अवश्य खत्म किया जाना चाहिए जो कानूनों की लोकतांत्रिक वैधता और कारोबार सुगमता के हित में है।

(लेखक लीगल प्रैक्टिशनर हैं)

कंपनियों के लिए अहम है एआई की स्वीकार्यता

तेजी से बदलते कारोबारी माहौल में प्रासंगिक बने रहने के लिए कंपनियों के निदेशक मंडल (बोर्ड) को अक्सर तकनीकी प्रगति अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ता है। क्लाउड कंप्यूटिंग और डिजिटल बदलाव जैसे नवाचार बेहद क्रांतिकारी पहल है लेकिन ब्लॉकचेन जैसे अन्य नवाचारों को अभी व्यापक रूप से स्वीकार नहीं किया गया है।

अब इसमें कोई संदेह नहीं है कि रोबोटिक प्रक्रिया स्वचालन या वर्चुअल और ऑगमेंटेड रियलिटी (वीआर/एआर) का प्रभाव कुछ उद्योगों पर पड़ सकता है। इसके अलावा इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी), 5जी और क्वांटम कंप्यूटिंग जैसी उभरती प्रौद्योगिकियों में भविष्य के प्रतिस्पर्धी परिदृश्य को बदलने की क्षमता है। ऐसे में यह जरूरी है कि कंपनियां इस क्षेत्र में हो रहे विकास पर नजर रखें।

साइबर सुरक्षा और गोपनीयता कानून के क्षेत्र में हो रही हलचल पर भी कंपनियों का ध्यान है ताकि इससे जुड़े जोखिम कम किए जा सकें। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) पर सबकी निगाहें हैं जो अवसर और चुनौतियां दोनों पेश करता है। ऐसे दौर में कंपनियों के लिए अहम है कि वे बदलते तकनीकी परिदृश्य में प्रभावी ढंग से इनका समाधान निकाल सकें।

एआई एक बड़ी परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में सामने आई है जो पूरे उद्योग और व्यापार मॉडल को नया स्वरूप देने में सक्षम है। इस वक्त कंपनियों के बोर्ड एआई को अपनाने की जरूरतों पर विचार-विमर्श कर रहे हैं और उन्हें अपनी सोच में भी इसकी तेज वृद्धि के अनुरूप ही तालमेल रखने की जरूरत है। मानव बुद्धिमता की तर्ज पर ही संज्ञानात्मक स्तर काम करने वाली मशीनी क्षमता यानी आर्टिफिशल इंटेलिजेंस अब भी दूर का लक्ष्य है। मौजूदा एआई में चैट जीपीटी, कंप्यूटर विजन और सुधार करने वाले एल्गोरिद्म जैसी मशीन शामिल हैं। इस लेख में 'एआई' का प्रयोग उन मौजूदा तकनीकों के लिए संक्षिप्त नाम के रूप में किया गया है जिसके तहत मशीन, पारंपरिक रूप से मनुष्यों द्वारा किए जाने वाले काम को पूरा करने में सक्षम होते हैं।

प्रभावी निरीक्षण का दौर इससे जुड़ी जानकारी से शुरू होती है। कंपनी के सदस्यों को एआई की अवधारणा, उसकी क्षमता और सीमाओं की आधारभूत समझ विकसित करनी चाहिए। इसे बाहरी विशेषज्ञों को शामिल किए जाने या प्रबंधन टीम के भीतर आंतरिक संसाधनों का लाभ उठाकर विभिन्न माध्यमों से हासिल किया जा सकता है। एआई से जुड़े कानूनी पहलू और नियामक परिदृश्य के बारे में जानकारी रखना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

अमित टंडन

भारत में एआई के इस्तेमाल से जुड़े नियमन के लिए कोई विशेष कानून नहीं हैं, लेकिन वह नवाचार और इससे जुड़े जोखिम के बीच संतुलन बनाने की कोशिश कर रहा है। इस संदर्भ में नीति आयोग द्वारा प्रकाशित कम से कम तीन शोध पत्र और इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के सात विशेषज्ञ समूहों द्वारा लिखा एक अन्य शोध पत्र का उल्लेख किया जा सकता है। यूरोपीय संघ के नियमों सहित कुछ अन्य नियम भी कंपनी बोर्ड के लिए तैयार मानकों के अनुरूप काम करने में मददगार साबित होंगे।

हालांकि, केवल इससे वाकिफ होना ही पर्याप्त नहीं है। कंपनी को अपनी एआई से जुड़ी समझ को कंपनी के भीतर कार्रवाई किए जाने योग्य रणनीतियों में बदलना चाहिए। इसमें व्यापार, कानून एवं प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों वाली विभिन्न टीमों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना भी शामिल है। ये टीमें एआई पर अमल के लिए एक प्रारंभिक ढांचा विकसित करने के साथ ही उन क्षेत्रों की पहचान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं जहां एआई कारोबारी प्रक्रियाओं को बढ़ा सकता है और क्षमता में सुधार कर सकता है। इसके साथ ही यह जोखिमों का आकलन और उद्योग के रुझानों की निगरानी भी करता है।

एक मजबूत एआई बुनियादी ढांचे के निर्माण के लिए तकनीकी कौशल से कहीं अधिक चीजों की आवश्यकता होती है। इसके लिए उच्च-गुणवत्ता वाला डेटा सबसे अहम है। एआई एकीकरण की यात्रा में दोहराव होता है और इस प्रगति की बारीकी से निगरानी की जानी चाहिए। कंपनी बोर्ड की तिमाही समीक्षा, जांच बिंदुओं के रूप में काम करती है जिसमें एआई से जुड़ी पहल की प्रभावशीलता और रणनीतिक उद्देश्यों की एकरूपता का आकलन किया जा सकता है। ये समीक्षा, सुधार के अवसर देती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि एआई कंपनियों का मूल्यवर्धन करते रहें।

इन प्रयासों के बावजूद, चुनौतियां बनी हुई हैं। इसमें एक प्रमुख चिंता एआई की तेजी से हो रही प्रगति और कंपनी बोर्ड की इसे प्रभावी ढंग से देखने की क्षमता के बीच बढ़ती खाई है। एआई शायद कॉरपोरेट बोर्ड की जगह नहीं ले सकते हैं और इसकी बदलाव लाने वाली क्षमता से कंपनियों के सदस्यों को सक्रिय तौर पर जुड़ने की आवश्यकता होती है।

मैकिंजी वैश्विक सर्वेक्षण ने वर्ष 2023 को एआई के लिए अहम वर्ष बताया और विशेषतौर पर इस बात का जिक्र किया कि कई एआई टूल के शुरू होने के एक वर्ष से भी कम समय में ही सर्वेक्षण में हिस्सा लेने वाले करीब एक-तिहाई लोगों ने कम से कम एक व्यावसायिक कामों में जेनेरेटिव एआई टूल का नियमित इस्तेमाल करने की जानकारी दी। हाल में फाइनैंशियल टाइम्स के एक लेख में यह संख्या 75 प्रतिशत बताई गई। अध्ययन में इस बात का जिक्र किया गया है कि एआई पहले से ही एक-चौथाई से अधिक कंपनियों के बोर्ड के एजेंडे में शामिल है। इसके अलावा, सर्वेक्षण में 40 प्रतिशत लोगों ने कहा कि उनके संगठन समग्र रूप से एआई में अपना निवेश बढ़ाएंगे।

इस तरह के रुझान से अंदाजा मिलता है कि आजकल कंपनियों के लिए यह बेहद जरूरी है कि वे एआई की क्षमता को पहचाने क्योंकि इसमें न सिर्फ कारोबार और उद्योग के पुराने तरीकों में बदलाव लाने बल्कि उन्हें और बेहतर बनाने की क्षमता है। इसीलिए कंपनियों के बोर्ड के लिए यह समझना अहम है कि एआई से जुड़े बदलावों को अपने क्षेत्र के लिए कैसे अपनाया जाए।

कंपनियों के लिए सिर्फ तकनीक के बारे में सोचना काफी नहीं है बल्कि यह भी ध्यान रखना होगा कि एआई का इस्तेमाल सही और ईमानदार तरीके से हो। एआई जब कंपनियों के कारोबारी परिचालन से ज्यादा जुड़ेगा तब मुमकिन है कि ये सवाल उठेंगे कि क्या ये सही फैसले ले रहा है, इसका जिम्मेदार कौन होगा और इसमें पारदर्शिता है या नहीं आदि। कंपनी की जिम्मेदारी यह सुनिश्चित करने की है कि एआई का इस्तेमाल सही तरीके से किया जा रहा है और यह कंपनी के मूल्यों के अनुरूप है।

एआई कंपनियों के लिए एक नए दौर का प्रतिनिधित्व कर रहा है और इस बात के संकेत मिल रहे हैं कि कंपनियों को अपने काम करने के तरीके में बदलाव लाना होगा। कंपनियां अगर एआई के बारे में सीखती हैं, दूसरों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार हैं, और नियमों का पालन करते हुए डेटा प्रबंधन तथा लगातार आकलन करती हैं तब वे एआई का इस्तेमाल अच्छी तरह कर सकती हैं। एआई के इस दौर में व्यापक और ईमानदार तरीके से इसका इस्तेमाल कर कंपनियां भविष्य में टिकाऊ सफलता के लिए कदम बढ़ा सकती हैं।

(लेखक इंस्टीट्यूशनल इन्वेस्टर एडवाइजरी सर्विसेज ऑफ इंडिया लिमिटेड से जुड़े हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

आपका पक्ष

गर्मी का यह ट्रेलर है, पूरी पिक्चर अभी बाकी है

देश के बहुत से राज्यों में लोग अभी आग बरसाने वाली गर्मी से परेशान हैं। कुछ राज्यों में तापमान 50 डिग्री के पार चला गया और कहीं कहीं इसके करीब पहुंच गया है। समुद्र तट किनारे की मुंबई भी गर्मी की चपेट में है जबकि कहते हैं कि वहां उतनी गर्मी नहीं पड़ती है कि आफत बन जाए लेकिन यहां भी निवासियों के लिए गर्मी आफत बन रही है। कुदरत हमें समझा रही है कि उसके विरुद्ध जाकर इंसान ने जो काम किया है, उसका खमियाजा उसे भुगतना पड़ेगा। माना जा रहा है कि यह गर्मी की बस झांकी यानी ट्रेलर मात्र है, पूरी फिल्म अभी बाकी है। अभी इतनी गर्मी पड़ रही है तो आने वाले समय में क्या स्थिति होगी? अगली पीढ़ी मौसम की इस मार से कैसे बच पाएगी? अगर गर्मी इसी तरह बढ़ती रही तो यह प्राणी जाति के अस्तित्व के लिए भी हानिकारक सिद्ध होगी। आज से कुछ समय पहले एसी और कूलर नाममात्र के

मौसम की ऐसी स्थिति देखकर लोगों को अब चिंता सताने लगी है कि अभी इतनी गर्मी पड़ रही है तो आने वाले समय में क्या स्थिति होगी

होते थे लेकिन बढ़ती गर्मी ने इनमें इजाफा कर दिया है। लेकिन सवाल यह है कि अगर इसी तरह पेड़ घटते रहे और गर्मी बढ़ती रही तो क्या आने वाले समय में एसी भी हमें गर्मी से बचाने में मदद कर पाएंगे। घर और दफ्तरों में एसी लगाकर गर्मी से तो बचा जा सकता है लेकिन अपने जरूरी काम करने के लिए घर-दफ्तर से बाहर कैसे निकलेंगे? बढ़ता तापमान मनुष्य के लिए ही नहीं, बल्कि सभी प्राणी जाति और फसलों के लिए भी हानिकारक है। लेकिन शायद ही यह कोई सोचता होगा कि आखिर गर्मी इतनी क्यों सताने लगी है? अतः सरकार, प्रशासन, मीडिया, समाजसेवी संस्थाओं, बुद्धजीवियों और अन्य सभी प्रबुद्धजनों को मौसम की बेरुखी को समझते हुए इसके लिए प्राथमिक और युद्ध स्तर पर जागरूकता अभियान चलाने होंगे।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

चुनाव में भ्रम फैलाता सोशल मीडिया

भारत के लोक सभा चुनावों को पहली बार सोशल मीडिया ने अपने भ्रमजाल से प्रभावित किया है। निर्वाचन आयोग और सरकार को चाहिए कि वह ऐसे ठोस प्रावधान करें कि भविष्य के चुनाव में सोशल मीडिया चुनाव में मतदाताओं को सही निर्णय लेने में सहायक बने न कि मतदाताओं को आधी-अधूरी मिलावटी जानकारी देकर उनके मतदान अधिकार को भटकाए। इस पर अगर सख्ती नहीं की गई तो मोबाइल की इस सहज-सरल सुविधा का राजनैतिक दल और उम्मीदवार अपने पक्ष में दुरुपयोग करने लगेंगे। आज हर मतदाता के हाथ में मोबाइल है। मोबाइल के उपयोग के लिए मतदाता को निष्पक्ष, स्वतंत्र और स्वस्थ लोकतंत्र के लिए सहायक बनाना नितांत आवश्यक है। इस चुनाव में जो व्यक्ति जिस राजनैतिक विचारधारा का पक्षधर है, वह दिन-रात सोशल मीडिया पर हर संभव ऐसी भ्रामक सूचनाएं परोस रहा है कि मतदाता के लिए अपना मत स्थिर करना कठिन हो गया है। इसके लिए बे सिर पैर की न जाने कितनी सूचनाएं जुटाई जा रही हैं। मुश्किल यह है कि ऐसी सूचनाओं के सही आधार का पता लगाना दुष्कर है। सरकार और चुनाव आयोग ही इस भ्रमजाल से निजात दिला सकते हैं।

निर्मल कुमार पाटोदी, इंदौर, मप्र

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

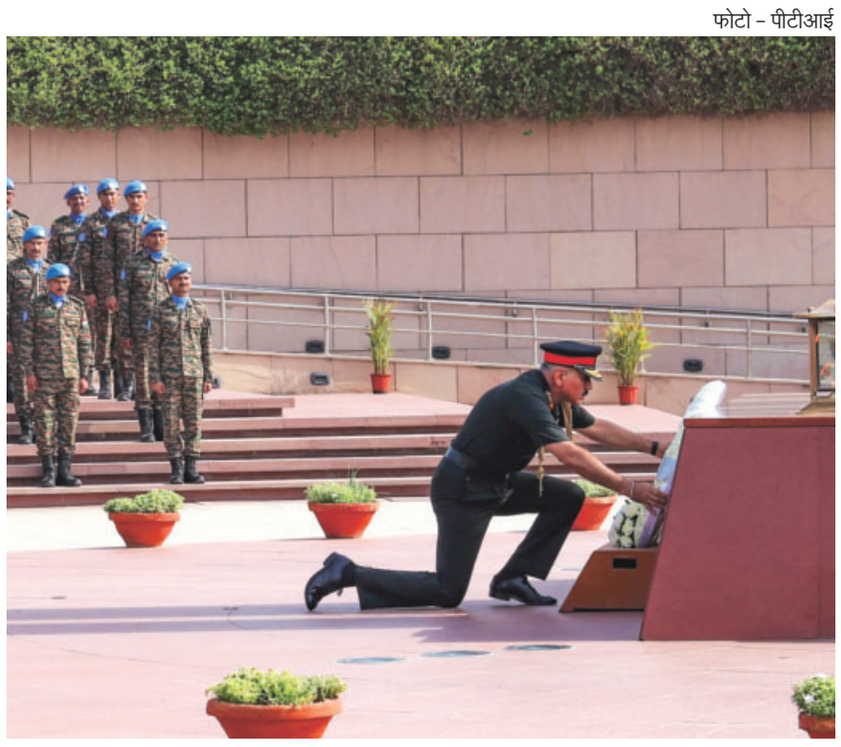

उप सेना प्रमुख लेफ्टिनेंट जनरल राकेश कपूर ने संयुक्त राष्ट्र शांति सैनिकों के 76वें अंतरराष्ट्रीय दिवस पर बुधवार को नई दिल्ली के राष्ट्रीय युद्ध स्मारक पर पुष्पांजलि अर्पित की।

दैनिक जागरण

संभावनाओं को पहचान कर ही प्रगति की राह खुलती है

घुसपैठ की समस्या

यह अच्छा हुआ कि बंगाल में बांग्लादेश से होने वाली घुसपैठ के मुद्दे को प्रधानमंत्री ने भी उठाया। इसके पहले गृहमंत्री भी इस मसले की चर्चा कर चुके हैं। गत दिवस एक चुनावी सभा को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने तृणमूल कांग्रेस पर घुसपैठ को बढ़ावा देने का भी आरोप लगाया। बंगाल में होने वाली घुसपैठ महज एक चुनावी मुद्दा नहीं रहना चाहिए। दशकों से जारी घुसपैठ के चलते जो तमाम बांग्लादेशी मुस्लिम बंगाल में आकर बस गए हैं और जिन्होंने मतदाता पहचान पत्र, राशन कार्ड, आधार कार्ड आदि भी हासिल कर लिए हैं, उनकी पहचान कर उन्हें वापस भेजने के प्रयास किए जाने चाहिए। यह लगभग तय है कि ऐसे किसी प्रयास का तृणमूल कांग्रेस के साथ-साथ कांग्रेस और वामपंथी दल भी विरोध कर सकते हैं। इसके आसार इसलिए है, क्योंकि इन दलों के लिए घुसपैठिए एक वोट बैंक बन गए हैं। घुसपैठ की समस्या से केवल बंगाल ही पीड़ित नहीं है। बंगाल के अलावा असम और पूर्वोत्तर के अन्य राज्य भी इस समस्या से दो-चार हैं। असम में तो घुसपैठ के कारण ही एनआरसी लाया गया। आखिर असम की तरह से बंगाल में भी एनआरसी को क्यों नहीं लागू किया जाना चाहिए? यह सही है कि ऐसे किसी कदम का संकीर्ण राजनीतिक कारणों से विरोध किया जाएगा, लेकिन उसे दरकिनार कर राष्ट्रीय सुरक्षा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

इस तथ्य की अनदेखी नहीं की जा सकती कि बंगाल के सीमावर्ती जिलों में जनसांख्यिकी बदल गई है। बांग्लादेश से सटे कुछ जिलों में मुस्लिम आबादी में अप्रत्याशित वृद्धि का एक बड़ा कारण सीमा पार से होने वाली घुसपैठ है। इस घुसपैठ पर सुप्रीम कोर्ट भी चिंता जता चुका है। बंगाल में कई निर्वाचन क्षेत्र ऐसे हैं, जहां के चुनाव परिणामों को बांग्लादेशी घुसपैठिए प्रभावित करते हैं। यह अच्छी स्थिति नहीं। इसका निराकरण किया ही जाना चाहिए। ऐसा किया जाना इसलिए भी आवश्यक हो गया है, क्योंकि बांग्लादेश के साथ-साथ म्यांमार से रोहिंग्या भी भारत में अवैध रूप से प्रवेश कर रहे हैं। वे भी अवैध तरीके से भारत के नागरिक बनने की कोशिश कर रहे हैं। बंगाल और पूर्वोत्तर राज्यों की सीमाओं में कई ऐसे गिरोह सक्रिय हैं, जो घुसपैठ कराते हैं। उनका तंत्र इतना सुगठित है कि बांग्लादेशी और रोहिंग्या बंगाल एवं पूर्वोत्तर के राज्यों से घुसपैठ करके जम्मू, हैदराबाद जैसे शहरों में जाकर बस गए हैं। चूंकि सीमाओं की सुरक्षा का दायित्व केंद्र सरकार पर है और उसने बांग्लादेश से होने वाली घुसपैठ को रोकने के लिए बंगाल में सीमा सुरक्षा बल को अतिरिक्त अधिकार भी प्रदान किए हैं, इसलिए घुसपैठ रोकना उसकी भी जिम्मेदारी है। अब जब भारत सबसे अधिक आबादी वाला देश बन गया है और बढ़ती आबादी के चलते संसाधनों पर दबाव बढ़ता जा रहा है, तब फिर यह सुनिश्चित किया ही जाना चाहिए कि कहीं से भी कोई घुसपैठ न होने पाए।

चिंता का विषय

पंजाब में जिस प्रकार से तापमान बढ़ रहा है, वह चिंता का विषय है। बठिंडा में यह मंगलवार को लगभग 50 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया। मौसम विभाग की मानें तो अस्सी वर्ष बाद ऐसा हुआ है जब बठिंडा का तापमान इतना अधिक दर्ज किया गया। अन्य शहरों में भी बढ़ते तापमान से लोग परेशान हैं। मंगलवार को ही मौसम विभाग ने चेतावनी जारी करते हुए यह कहा है कि अभी भीषण गर्मी से राहत मिलने वाली नहीं है। साथ ही विभाग ने खेतों में फसलों के अवशेष जलाने को भी बढ़ रहे तापमान का एक प्रमुख कारण माना है। मौसम विभाग के निदेशक डा. एके सिंह की यह बात गौरतलब है कि नाड़ सहित फसलों के अवशेषों को जलाने से पर्यावरण में कार्बन की मात्रा आवश्यकता से अधिक बढ़ती जा रही है। इसके कारण ही तापमान सामान्य से अधिक बढ़ रहा है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि इस बार भी प्रदेश में किसान खेतों में नाड़ को बेतहाशा आग लगा रहे हैं। ऐसा तब हो रहा है, जबकि हर वर्ष पराली और नाड़ के धुएं को लेकर पंजाब से दिल्ली तक पर्यावरण को होने वाली क्षति पर चिंताएं जताई जाती हैं। इस बार लोकसभा चुनाव होने के कारण सरकार और प्रशासन की तरफ से इस पर खास सख्ती भी नहीं की जा रही है, जिसका अनुचित लाभ किसान उठा रहे हैं। बढ़ते तापमान और मौसम विभाग की चेतावनी को ध्यान में रखते हुए सरकार और प्रशासन को खेतों में अवशेष जलाने से रोकने के लिए सख्त और ठोस कदम उठाना चाहिए। यह मनुष्य के स्वास्थ्य से भी जुड़ा गंभीर मामला है।

अभी भीषण गर्मी से राहत मिलने वाली नहीं है। मौसम विभाग ने खेतों में फसलों के अवशेष जलाने को भी बढ़ रहे तापमान का प्रमुख कारण माना है

जम्मू-कश्मीर में भारी मतदान के मायने

विजय क्रांति

अनुच्छेद-370 के हटने और लगातार पांच साल की शांति के फल चखने के बाद कश्मीर की जनता को समझ आ गया कि अलगाववाद और लोकतंत्र में क्या अंतर है

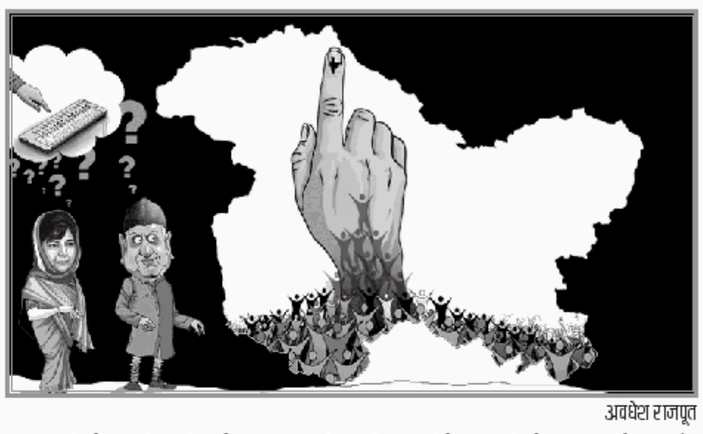

अवधेश राजपूत

लोकसभा चुनाव के समुद्र मंथन में जहां कुछ नेताओं की विषैली टिप्पणियों ने राजनीतिक परिदृश्य को दूषित करने का काम किया तो वहीं जम्मू-कश्मीर से आए समाचारों से इस मंथन में कुछ रत्न और अमृत कलश भी छलक कर बाहर आए। एक समय वह भी था, जब राज्य की राजनीति पर कुंडली मारकर बैठे कुछ परिवारों के नेता गुपकार रोड के बंगलों से देश को धमका रहे थे कि अगर मोदी सरकार ने अनुच्छेद-370 को खत्म करने का प्रयास भी किया तो कश्मीर की जनता उठ खड़ी होगी और पूरे राज्य में खून के दरिया बहने लगेंगे। यह बात अलग है कि अगस्त 2019 में जब मोदी सरकार ने अनुच्छेद-370 और 35-ए का सफाया कर दिया तब ऐसा कुछ नहीं हुआ। पूरी दुनिया ने देखा कि इतने बड़े बदलाव के बाद भी कश्मीर में न तो किसी ने पत्थर फेंके और न कोई हड़ताल हुई। अब अनुच्छेद-370 के हटने के पांच साल बाद हो रहे पहले लोकसभा चुनाव में कश्मीर घाटी की जनता ने मतदान में जिस प्रकार पूरे उत्साह से बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया, उसने पूरी दुनिया को चौंका दिया।

पिछली सदी के आखिरी दशक में इसी जम्मू-कश्मीर में चुनावों के दौरान यह भी देखने को मिला था कि श्रीनगर के एक पोलिंग बूथ के बाहर रखे एक कलर टीवी के साथ आतंकवादियों का एक पोस्टर लगा था जिस पर लिखा था, 'इस बूथ पर पहला वोट डालने की हिम्मत दिखाने वाले वोटर को यह टीवी इनाम में मिलेगा।' जबकि इस बार के चुनाव में अलगाववादियों की 'राजधानी' बन चुके श्रीनगर में 2019 के 14.4 प्रतिशत के मुकाबले 38.5 प्रतिशत कश्मीरी मतदाताओं ने अपने मताधिकार का उपयोग किया। हिंसा की खबरों के केंद्र में रहने वाले अनंतनाग और बारामूला ने 59 प्रतिशत से ज्यादा मतदान कर पिछले 35 साल के रिकार्ड तोड़ डाले और दिल्ली जैसे महानगर से भी बाजी मार ली। इन चुनावों की एक खास बात यह भी रही कि पूरे चुनाव अभियान के दौरान समूची कश्मीर घाटी में न तो चुनाव के बहिष्कार की एक भी अपील जारी हुई और न ऐसा कोई कोई पोस्टर देखने को मिला। पूरी घाटी में एक भी ऐसा बूथ नहीं था, जिसे 'जीरो-वोट' बूथ बताकर भारत-विरोधी कोई नया नैरेटिव गढ़ा जा सकता। इस बार तो वोटिंग की लंबी कतारों में खड़े लोगों के चेहरों की मुस्कुराहटों और आत्मविश्वास ने दिखा दिया कि अनुच्छेद-370 हटने और लगातार पांच साल की शांति के फल चखने के बाद जनता को समझ आ गया कि अलगाववाद और लोकतंत्र में क्या अंतर है। अनुच्छेद-370 हटने के बाद घाटी में स्थापित हो चुके प्रभावशाली सुरक्षा परिवेश, कानून और व्यवस्था की बहाली, पाकिस्तान समर्थक हुर्रियत की गुंडागर्दी की समाप्ति और हर महीने जारी होने वाले हड़ताल कैलेंडर के शिकंजे से मुक्ति के बाद आम कश्मीरियों को पता चल चुका है कि खून-खराबे और अशांति की उन्होंने और उनके बच्चों ने कितनी बड़ी कीमत चुकाई।

अनुच्छेद-370 की समाप्ति के बाद राज्य के इतिहास में पहली बार कराए गए ब्लाक और जिला स्तर पर हुए चुनावों में स्थानीय नेताओं की भारी सक्रियता ने ही संकेत दे दिया था कि अब जम्मू-कश्मीर की राजनीति अब्दुल्ला और मुफ्ती जैसे परिवारों से पूरी तरह मुक्त होने को आतुर है। लोकसभा चुनावों ने उसी रुझान की पुष्टि की है। चुनाव की बात करें तो श्रीनगर में आठ मान्यता प्राप्त दलों सहित 24 उम्मीदवार मैदान में हैं। बारामूला में आठ पार्टियों समेत 22 और अनंतनाग-राजौरी में 10 पार्टियों समेत 20 उम्मीदवार ताल ठोक कर आम कश्मीरी वोटर से वोट मांगने को उतरे। आइएनडीआइए का हिस्सा होते हुए भी नेशनल कांफ्रेंस और पीडीपी के उम्मीदवार घाटी की तीनों सीटों पर आपस में भिड़े। यह बात भी रोचक है कि कांग्रेस ने नेकां के साथ गठबंधन में उसे घाटी की तीनों सीटें देकर खुद जम्मू और ऊधमपुर सीटों पर लड़ने का फैसला किया। जबकि भाजपा ने घाटी में अपना एक भी उम्मीदवार नहीं उतारा। दुनिया के सबसे बड़े इस्लामी टीवी चैनल और कश्मीरी अलगाववाद का चैंपियन अल-जजीरा इसे घाटी में भाजपा की अलोकप्रियता के प्रमाण के तौर पर पेश करने में लगा था। हालांकि अल-जजीरा और उसके भारतीय वामपंथी समर्थक यह बात नहीं समझ पा रहे हैं कि घाटी में चुनावी मैदान से बाहर रहकर भाजपा ने कूटनीति का एक बड़ा दांव खेला है। उसने कश्मीर के गुपकार रोड गैंग, हुर्रियत और पाकिस्तान समर्थक तत्वों के हाथ से यह मौका छीन लिया कि भाजपा विरोध के नाम पर सभी अलगाववादियों को इकट्ठा करके घाटी की राजनीति को फिर से केंद्र विरोधी एजेंडा दे दिया जाए।

ऐसा नहीं है कि कश्मीर में अलगाववाद का समर्थन करने वालों और भारत-विरोधी नैरेटिव गढ़ने वालों ने हथियार डाल दिए हैं। अब मोदी विरोधी एक नया नैरेटिव खड़ा करने में लगे हैं। राज्य में बदले माहौल का अपने एजेंडे को सिरे चढ़ाने के लिए इस्तेमाल करने के लिए ये लोग जेलों में बंद कश्मीरियों की रिहाई, राज्य से राष्ट्रपति शासन हटाने और विधानसभा को बहाल कर पूर्ण राज्य का दर्जा देने की बातें कर रहे हैं। वास्तविकता यही है कि कश्मीर के अलगाववादी इतिहास को देखते हुए ऐसे कदमों से यह राज्य फिर अशांति और अलगाववाद की चपेट में आ सकता है और पांच साल की उपलब्धियां निष्प्रभावी हो जाएंगी। ऐसे में, सही नीति यही होगी कि सुप्रीम कोर्ट के निर्देश को देखते हुए आगामी सितंबर से पहले न केवल राज्य विधानसभा के चुनाव कराए जाएं, बल्कि पंचायत, ब्लाक और जिला समितियों के भी चुनाव कराए जाएं, जिससे राज्य की राजनीति में गुपकार गैंग और उसके अलगाववादी आकाओं के बजाय आम जनता के प्रतिनिधियों का नियंत्रण अपनी जड़ें जमा सके। जम्मू-कश्मीर को पूर्ण राज्य का दर्जा देने से पहले उसे अनुच्छेद-370 के नकारात्मक असर को पूरी तरह उतारने का समुचित समय दिया जाना अत्यंत आवश्यक है। इसलिए कश्मीर को लेकर कोई भी फैसला जल्दबाजी में नहीं होना चाहिए, निहित स्वार्थी तत्वों को खुश करने और उनसे मिलने वाली वाहवाही का लालच पूरे देश और भारत सरकार के लिए बहुत महंगा साबित होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार और सेंटर फार हिमालयन एशिया स्टडीज एंड एंगेजमेंट के चेयरमैन हैं)

response@jagran.com

आखिर संविधान बचाने का मतलब क्या है

अरविंद कुमार

संविधान के उल्लंघन का सबसे बड़ा उदाहरण रंगनाथ मिश्र आयोग का गठन था, जिसकी चर्चा फिर से हो रही है

संविधान सभा के प्रमुख सदस्य। फाइल

वर्तमान लोकसभा चुनाव में संविधान बचाना एक मुद्दा बना हुआ है। कांग्रेस के नेतृत्व वाले गठबंधन के घटक दल भाजपा पर चुनाव जीतने के बाद संविधान बदलने का आरोप लगा रहे हैं, वहीं प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी कह रहे हैं कि उनके रहते हुए कोई भी संविधान के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकता। आजाद भारत में यह पहला आम चुनाव है, जिसमें भारत का संविधान एक प्रमुख मुद्दा बन गया है। इससे भारत का संविधान जन-जन तक पहुंच रहा है। ऐसा होना भारतीय जनमानस में संविधान की स्वीकार्यता और महत्व, दोनों ही बढ़ाएगा। संविधान बचाने के शोर के बीच सबसे महत्वपूर्ण सवाल छूट गया कि संविधान बचाने से मतलब क्या है? यह सवाल इसलिए भी महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि हमारा संविधान अनुच्छेद-368 के तहत संसद को इसमें संशोधन करने की शक्ति देता है। वहीं अनुच्छेद-13 और 32 सुप्रीम कोर्ट को शक्ति देते हैं कि वह ऐसे सभी कानूनों को निरस्त कर दे, जो मूल अधिकारों के खिलाफ हों। ऐसे में राजनीतिक पार्टियां यह नहीं बता रही हैं कि संविधान बचाने से उनका वास्तविक मतलब क्या है? वह संविधान को कैसे बचाएंगी? वह क्या नहीं करेंगी, जिससे संविधान बचा रहेगा?

शासन चलाने के लिए लिखी गई सबसे प्रमुख कानून की किताब को संविधान कहा जा सकता है, लेकिन वास्तव में यह किसी भी देश में रह रहे शासकों और जनता के बीच बनी सहमति का दस्तावेज होता है। दुनिया में ऐसे दस्तावेज तैयार करने की शुरुआत 15 जून, 1215 को ब्रिटेन में मैग्नाकार्टा से होती है, जिसके तहत वहां के तत्कालीन राजा जान ने नागरिकों को तमाम अधिकार दिए। भारत का संविधान संविधान सभा के सदस्यों के बीच बनी सहमति का दस्तावेज है। संविधान सभा में निर्णय मतदान द्वारा होता था, एक-एक प्रविधान पर बहस करके वोट डालकर निर्णय लिया गया। ऐसे में संविधान बचाने का मतलब पूर्व में संविधान सभा में जिन विषयों पर निर्णय हो चुका है, उन्हें वैसे ही माना जाना है। ऐसा करने के लिए जरूरी हो जाता है कि संविधान सभा ने जिन बातों को नकार दिया, उनको किसी भी कीमत पर दोबारा नहीं उठाया जाए, परंतु देश में ऐसा हो नहीं रहा है।

भारत में सिर्फ संविधान नहीं, बल्कि संविधान सभा के निर्णयों का भी उल्लंघन किया जा रहा है। इसके तीन बड़े उदाहरण हैं। पहला है शीर्ष न्यायपालिका में जजों की नियुक्ति के लिए कलेजियम सिस्टम का अस्तित्व में आना। 1993 के बाद भारत की शीर्ष न्यायपालिका ने कलेजियम नामक ऐसी व्यवस्था बना ली, जिसके तहत सुप्रीम कोर्ट और उच्च न्यायालयों में जज ही जज की नियुक्ति करते हैं। ऐसा करने वाला भारत एकमात्र देश है। बाकी देशों में जजों की नियुक्ति सरकार या फिर वहां की संसद करती है। हमारे यहां जज खुद ही जज की नियुक्ति करते हैं। ऐसा करने के लिए सुप्रीम कोर्ट ने संविधान में दिए गए 'परामर्श' शब्द की परिभाषा को बदल कर 'बाध्यता' कर दिया। सुप्रीम कोर्ट ने जजों की नियुक्ति की कलेजियम नामक जो विधि बनाई, वैसी व्यवस्था को संविधान सभा ने पहले ही खारिज कर दिया था। मोदी सरकार ने सभी पार्टियों की सहमति से संविधान संशोधन द्वारा इस व्यवस्था को बदलने की कोशिश की, लेकिन सफल नहीं हो पाई।

दूसरा उदाहरण विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के मध्य शक्ति के विभाजन की सीमा को समाप्त करने की कोशिश है। शक्ति का उक्त विभाजन आधुनिक लोकतंत्र की बुनियाद है, लेकिन एक समूह पिछले कुछ वर्षों से इस विभाजन को समाप्त करने की लगातार कोशिश कर रहा है। इसके लिए वह लगातार दबाव डाल रहा है कि बड़े अधिकारियों की चयन समिति में मुख्य न्यायाधीश को सदस्य बनाया जाए। चयन समिति में बतौर सदस्य मुख्य न्यायाधीश की मौजूदगी न सिर्फ शक्ति के विभाजन का उल्लंघन करती है, बल्कि इस पद की गरिमा को भी नुकसान पहुंचाती है। न्यायपालिका का काम कार्यपालिका के कामों की समीक्षा करना है। जब न्यायाधीश खुद ही चयन समिति में शामिल हो जाएगा, तो न्यायपालिका किस नैतिक शक्ति से ऐसी नियुक्तियों की समीक्षा करेगी?

संविधान के उल्लंघन का तीसरा सबसे बड़ा उदाहरण रंगनाथ मिश्र आयोग का गठन था, जिसकी आजकल खासी चर्चा है। मनमोहन सरकार ने अल्पसंख्यक मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए वर्ष 2004 में इस आयोग का गठन किया था। इसके गठन का आरंभिक उद्देश्य धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों की स्थिति का अध्ययन करना था। बाद में इसे मुस्लिमों और ईसाइयों की कुछ जातियों को अनुसूचित जाति की सूची में शामिल करने के लिए जांच की जिम्मेदारी दे दी गई थी। आयोग की रिपोर्ट में मुस्लिमों और ईसाइयों की जातियों को अनुसूचित जाति में शामिल करने की सिफारिश की गई, जिसे विवाद बढ़ने पर तत्कालीन सरकार ने नहीं माना। रंगनाथ मिश्र आयोग को दिया गया कार्य संवैधानिक रूप से सही नहीं था, क्योंकि अनुसूचित जाति/जनजाति के मामलों को देखने के लिए संविधान निर्माताओं ने हमारे संविधान के अनुच्छेद-338 में राष्ट्रपति द्वारा एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रविधान किया था, जिसे बाद में संशोधित करके अनुसूचित जाति आयोग में बदल दिया गया। इस आयोग ने मुस्लिमों और ईसाइयों की कुछ जातियों को अनुसूचित जाति में शामिल करने की मांग को पूर्व में कई बार खारिज कर दिया था। साफ है मनमोहन सिंह सरकार ने न केवल संविधान के अनुच्छेद-338 का उल्लंघन किया, बल्कि संविधान निर्माताओं की उस बात को भी नहीं माना, जिसके तहत उन्होंने अनुसूचित जातियों से जुड़े मामलों को देखने के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रविधान किया।

(लेखक लंदन विश्वविद्यालय के रायल हालवे कालेज में सहायक प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

स्वयं में झांकें

आज का इंसान हर समय डरा रहता है, आशंकित रहता है। इन दिनों हममें से अधिकांश का प्यार हो या गुस्सा सब बनावटी होने लगा है। दूसरों का साथ पाने की चाह में हमारे लिए कुछ घड़ी अपने साथ बिताना मुश्किल होता जा रहा है। दिन-रात लगाने के बावजूद हमारे काम खुशी नहीं दे रहे। यह सब धर्म के बदलते स्वरूप एवं इंसान के निराशावादी सोच का परिणाम है। विज्ञान की तरह अध्यात्म ने भी शाश्वत नियमों की खोज की थी। आज वैज्ञानिक खोजें तो जारी हैं, किंतु धर्म के क्षेत्र में नियमों की खोज का दरवाजा बंद है। यही समस्या की जड़ है। कोई धर्म हो या फिर वस्तु, हम दो तरह से चीजों को देखते हैं। कभी हम पर प्रेम का चश्मा चढ़ा होता है तो कभी डर का। लेंस बदलते ही हमारा सोच बदल जाता है। डर चीजों को एक रूप दे रहा होता है, तो प्रेम एक अलग ही धरातल। हम इसके लिए जिम्मेदार नहीं हैं कि हमारी आंखें क्या देखती हैं? हम इसके लिए जिम्मेदार हैं कि हम उसे कैसे अपनाते हैं।

हर बीज की अपनी क्षमता होती है। कुछ बातें तो हमारे काबू से ही बाहर होती हैं और कुछ हमारे अपने फैसलों पर टिकी होती हैं। अपने फैसलों को अपनी प्रकृति एवं वास्तविक धरातल से जोड़ना ही स्थायी खुशी का रास्ता है, जिसके लिए खुद को जानना जरूरी है। यूं भी काम सबके हो ही जाते हैं। मोटे-पतले, श्वेत-अश्वेत, अंतर्मुखी-बहिर्मुखी, सबकी अपनी खूबियां होती हैं, पर समस्या यह है कि दूसरों को जानने एवं दूसरों के क्षेत्र में झांकने की चाह में हम खुद को समय नहीं देते। खुद में नहीं रह पाते। अगर आप अपनी जिंदगी के ज्यादातर हिस्से से नाखुश हैं। तनाव और रोगों में घिरे रहते हैं। हर रोज का जीवन बिताना मुश्किल हो रहा है तो स्वयं में झांकें। यह पूछें कि मेरे लिए क्या जरूरी है? मेरा जीवन कैसा होना चाहिए? अपने स्वाभाविक मूल्यों को पहचान कर काम करना कभी निराश नहीं करता।

ललित गर्ग

पारंपरिक ज्ञान से मौसम का अनुमान

आयुषी दवे

हमारे पूर्वजों ने आसमान, धरती, पशु-पक्षियों के बर्ताव को देखा और वह लिख दिया, जो आज भी सटीक बैठता है

भारत विविधताओं से भरा देश है। हमारी पुरानी परंपराओं और मान्यताओं को देख आज के विज्ञानी तक हैरान रह जाते हैं। भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में प्रचलित पुरानी कहावतों और मुहावरों के मायने बहुत गहरे और सटीक होते हैं। चाहे कोई भी तीज-त्योहार हो, तिथि हो सबको लेकर कोई न कोई लोकोक्ति, कहावत, मुहावरे जरूर मिल जाते हैं। चाहे होली-दीवाली हों या मकर संक्रांति-अक्षय तृतीया। यहां तक कि पशु-पक्षियों और कीट-पतंगों की गतिविधियों से उस साल के मौसम की सटीक जानकारी हासिल कर लेने की हमारी गौरवशाली विधा को सहेजना होगा। हमारे पूर्वजों ने आसमान को देखा, धरती को देख, पशु-पक्षियों के बर्ताव को देखा और वह लिख दिया, जो आज भी जस का तस सटीक बैठता है।

इन दिनों देश में नौतपा की बहुत चर्चा है। इस बार बहुत गर्मी पड़ रही है, लेकिन मान्यता है कि रोहिणी नक्षत्र के शुरुआती नौ दिन बहुत तपते हैं तो अच्छा होता है। माना जाता है कि इन दिनों सूर्य जितना तपेगा और जितनी लू चलेगी, बारिश भी उतनी अच्छी होगी। नौतपा की भीषण गर्मी की विविधता पारिस्थितिकी तंत्र से भी जुड़ी है। अत्यधिक गर्मी पड़ेगी तो खेतों में विचरने वाले जहरीले जीव-जंतु और कीट-पतंगे खत्म होंगे। फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों के अंडे खत्म होंगे। यह किसानों के लिए फायदेमंद होगा। रोहिणी नक्षत्र में गर्मी अधिक होने और मृग नक्षत्र में खूब आंधी चलने से आर्द्रा नक्षत्र के प्रारंभ होते ही बादलों की गर्जना, बारिश की प्रबल संभावना बनती है। पहले दो दिन लू न चले तो चूहे अत्यधिक बढ़ेंगे। दूसरे दो दिन लू न चले तो धान को चट करने वाले कीट बहुत तेजी से बढ़ेंगे। तीसरे दो दिन लू न चले तो टिड्डी दल आने की आशंका बढ़ जाती है। चौथे दिन लू न चले तो नजला-बुखार जैसे रोगों का प्रकोप बढ़ता है। पांचवें दिन लू न चले तो अल्प वर्षा, छठे दो दिन लू न चले तो जहरीले जीव-जंतुओं जैसे सांप-बिच्छू की बहुतायत होती है और सातवें दो दिन लू न चले तो आंधी चलने का अंदेशा रहता है। शुक्रवार के बादल शनिवार को छाए रह जाएं, तो वे बादल बिना पानी बरसाए नहीं जाएंगे।

इस बार नौतपा तप रहा है। बस हमें अपने लिए सावधानी बरतनी होगी। गैरजरूरी होने पर दोपहर में बाहर न निकलें, लेकिन यह तो सोचना ही होगा कि जब न तो सैटेलाइट, न मौसम विज्ञान केंद्र, न वैज्ञानिक उपकरण थे, तब भी केवल प्रकृति, पशु-पक्षियों के हाव-भाव और धरती-आसमान के मिजाज को हमारे पूर्वज कैसे भांप लेते थे? हमारा यह ज्ञान अद्वितीय धरोहर है। इसे संभालना होगा, आगे और भी परिष्कृत करना होगा, ताकि हम अपनी भावी पीढ़ियों को भी इस गहरे ज्ञान से परिचित कराते रहें।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

इस लापरवाही का इलाज भी हो

'विकसित देश के सपने को तोड़ते हादसे' शीर्षक से लिखे आलेख के तहत राजीव सचान ने देश में हो रहे अग्निकांड और अन्य हादसों के कारणों की पड़ताल की है। गुजरात के राजकोट में गेमिंग जोन में आग लगने से 28 लोगों की जान चली गई, इसमें बच्चे भी शामिल हैं। दिल्ली के एक बेबी केयर सेंटर में भी भयानक आग लगने से छह नवजात बच्चों की मौत हो गई और कई गंभीर हालत में हैं। अब इन अग्निकांडों की जांच के आदेश दिए जा रहे हैं, मुआवजे का मरहम लगाया जा रहा है, जाने-माने लोगों द्वारा दुख जाहिर किया जा रहा है। कुछ समय पश्चात सभी लोग ऐसे ही किसी अगले अग्निकांड के इंतजार में लंबी तान कर सो जाएंगे। लापरवाही से क्या सबक लिया? इस पर कोई गंभीरता नहीं दिखाई जाएगी। अगर इससे पहले हुए अग्निकांडों से सबक लिया गया होता तो शायद ये अग्निकांड न होते। अगर लापरवाही बरतने वाले लोगों पर सख्त एक्शन लिया जाए तो इस तरह के हादसों पर लगाम लग सकती है, लेकिन ऐसा करे कौन? सत्ताधारियों और राजनेताओं को तो अपने वोट बैंक की चिंता है। जिस देश में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर हो, जहां सरकारी तंत्र भ्रष्टाचार के दलदल में बहुत बुरी तरह धंसा हो, वहां भविष्य में भी ऐसे हादसों पर शायद ही लगाम लगे, क्योंकि यहां पैसे के लिए अवैध और असुरक्षित निर्माण खूब होते हैं। सवाल तो यह भी खड़ा होता है कि जो सरकारें और अन्य लोग बहुमंजिला भवन बनाने के लिए करोड़ों रुपये खर्च कर देते हैं वे कुछ हजार रुपये खर्च कर आग बुझाने के पर्याप्त इंतजाम क्यों नहीं करते?

मेलबाक्स

अगर देश में निष्पक्ष जांच की जाए तो बहुत-सी इमारतों-भवनों में न तो आग से निपटने के लिए उचित प्रबंध किए गए होंगे और न ही भूकंप से बचाव के लिए।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

उम्मीदों पर फिरा पानी

दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल की उम्मीदों पर आज पानी फिर गया। मेडिकल ग्राउंड पर लगाई गई उनकी याचिका को सुनने से सुप्रीम कोर्ट ने इन्कार कर दिया। बताते चलें कि केजरीवाल ने अपनी स्वास्थ्य परीक्षण के लिए कोर्ट से सात दिन की अतिरिक्त अवधि की मांग की थी। अरविंद केजरीवाल को सुप्रीम कोर्ट के आदेशानुसार दो जून को सरेंडर करना है। राजनीतिक विश्लेषक बताते हैं कि अरविंद केजरीवाल को भरोसा है कि आइएनडीआइए सरकार बनाएगी तो वह किसी न किसी तरह तिहाड़ जेल जाने से बच जाएंगे। अरविंद केजरीवाल ने अंतरिम जमानत की अवधि बढ़ाने वाली याचिका को तत्काल लिस्ट करने का आग्रह किया था। शीर्ष अदालत ने उनके आवेदन पर विचार करने से इन्कार कर दिया। मालूम हो कि दिल्ली आबकारी नीति घोटाले में आरोपी बनाए गए दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को शीर्ष न्यायालय ने चुनाव प्रचार के लिए एक जून तक अंतरिम जमानत दी है। केजरीवाल को 21 मार्च को गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल भेजा गया था। जेल जाने के बाद भी उन्होंने अपने संवैधानिक पद से इस्तीफा नहीं दिया था। बहरहाल दो जून को देखना है कि वह तिहाड़ जेल जाने से पूर्व मुख्यमंत्री का पद से इस्तीफा देते हैं या नहीं?

युगल किशोर राही, ग्रेटर नोएडा

आग से सुरक्षा आवश्यक

दिल्ली में बच्चों के एक अस्पताल में आग लगने की हृदय विदारक घटना हो जाना पीड़ित परिजनों के लिए अपूरणीय क्षति है। प्रशासन एवं दिल्ली सरकार जवाबदेही तय करने के साथ ही इस घटना से जुड़े हर तकनीकी एवं कानूनी पहलुओं की जांच करे। आक्सीजन सिलेंडर का फटना एवं शार्ट सर्किट से आग लगने की घटना सुरक्षा मापदंडों में खामी का गंभीर मामला है। आगजनी की घटनाओं की अन्य किसी जगह पर पुनरावृत्ति न हो, इसके पुख्ता उपाय तो केंद्र और राज्य सरकारों को करने होंगे। अग्नि सुरक्षा संबंधी ढांचागत सुविधाओं का त्रैमासिक निरीक्षण बिना किसी चूक के होना चाहिए।

युगल किशोर शर्मा, फरीदाबाद

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,

डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा

ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक- स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाशत्रिपाठी*

दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली

कैंसर के प्रति सजगता बने हमारी प्राथमिकता

देश में औसतन 2.2 हजार लोग रोजाना कैंसर से मौत के मुंह में समा रहे हैं। कैंसर से चीन के बाद भारत में सर्वाधिक मौतें हो रही हैं। आइसीएमआर और राष्ट्रीय कैंसर रजिस्ट्री प्रोग्राम के आंकड़े बताते हैं कि भारत में कैंसर की भयावहता त्रासदपूर्ण तरीके से बढ़ रही है, क्योंकि देश के 64 प्रतिशत मरीज ग्रामीण इलाकों से आ रहे हैं और सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्रों पर व्यावहारिक रूप में कैंसर की पहचान के लिए कोई प्रामाणिक तंत्र ही उपलब्ध नहीं है। लिहाजा सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के माध्यम से कैंसर के प्रति जागरूकता आने वाली केंद्र सरकार के लिए प्राथमिकता होनी चाहिए

लक्षणों के आधार पर आरंभिक अवस्था में ही पहचान होने की दशा में कैंसर के प्रसार को रोकने में मिलती है मदद। प्रतीकात्मक

डा. अजय खेमरिया
लोकनीति विश्लेषक

बीते दिनों सरकार ने संसद में जानकारी दी कि उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बंगाल, तमिलनाडु और राजस्थान देश में कैंसर के बड़े हब के रूप में विकसित हो रहे हैं। पंजाब की हालत पहले से ही इस मामले में खराब है। नेशनल कैंसर रजिस्ट्री के आंकड़ों को ही विश्लेषित किया जाए तो देश में हर साल जितने मरीज कैंसर रोगी के रूप में चिह्नित होते हैं, उनमें से 55 प्रतिशत की मौत हो जाती है। वर्ष 2022 में 14.61 लाख लोग कैंसर रोगी के रूप में अलग अलग अस्पतालों में भर्ती किए गए, जिनमें से आठ लाख से अधिक की मौत हो गई। इसी तरह वर्ष 2021 में 14.26 लाख में से 7.89 लाख एवं 2020 में 13.92 लाख में से 7.7 लाख की मौत हुई है। कैंसर पीड़ितों में लगभग 65 प्रतिशत मरीज 45 से 60 साल आयुवर्ग के हैं। ध्यान देने वाला तथ्य यह भी है कि महिलाओं में तीसरी सबसे बड़ी बीमारी को कैंसर के रूप में चिह्नित किया गया है।

इन आंकड़ों के इतर सच्चाई का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि आज भी देश के मैदानी इलाकों में कैंसर की पहचान के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्र सक्षम नहीं हैं। जिला चिकित्सालय जैसे सरकारी केंद्रों पर भी कैंसर की पहचान के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। इन केंद्रों पर न तो ओंकोलाजी विभाग है और न प्रयोगशाला, जहां मरीजों के शुरुआती लक्षणों की जांच की जाती है। मजबूरी में ऐसे मरीजों के लिए जांच हेतु मेडिकल कालेज स्तर के शहरी केंद्रों पर जाना पड़ता है। इस दौरान कैंसर के प्रारंभिक लक्षण गंभीर होकर शरीर में फैल जाते हैं।

त्रासदी यहीं तक सीमित नहीं है, क्योंकि बड़े शहरी केंद्रों पर भी कैंसर की पहचान और निदान की जो व्यवस्था है, वह बहुत ही खर्चीली है। डाक्टर के प्रारंभिक परामर्श शुल्क मुंबई, दिल्ली, भोपाल, लखनऊ, पटना जैसे शहरों में आठ सौ रुपये से लेकर पांच हजार रुपये तक है। पीएफटी, ईईजी, सीबीसी, सीटी, पेट स्केन लैब टेस्ट अगर एक साथ हो तो खर्चा एक लाख रुपये तक आ सकता है। बायोप्सी के लिए लगभग 35 हजार और एंडोस्कोपी के लिए अस्पताल 10 से लेकर 50 हजार रुपये तक चार्ज करते हैं। कैंसर का पता चल जाने के बाद साधारण सर्जरी का खर्च 2.80 लाख रुपये से 10 लाख रुपये तक सामान्य है। रोबोटिक सर्जरी पर लगभग पांच लाख का खर्च आता है। कीमोथेरेपी की एक यूनिट औसतन 18 हजार रुपये की पड़ती है। इंटरनल रेडिएशन थेरेपी 60 हजार रुपये से सवा पांच लाख रुपये और एक्सटर्नल रेडिएशन का खर्चा तीन लाख से बीस लाख रुपये तक है। इम्यूनोथेरेपी की औसत दर लगभग साढ़े चार लाख रुपये है। बोनमेरो ट्रांसप्लांट पर 15 लाख से 48 लाख रुपये खर्च होता है। इनके अलावा, टारगेट एवं हार्मोन थेरेपी का विकल्प भी लाखों में है। जाहिर है भारत में कैंसर के इस उपचार को वहन करना केवल आर्थिक रूप से करोड़पति पृष्ठभूमि वाले परिवारों के लिए ही संभव है।

उपचारात्मक प्रविधियां : असल में कैंसर की बीमारी हमारी विकृत जीवनशैली के साथ पारिस्थितिकी तंत्र में आए बदलाव के कारण भी तेजी से बढ़ी है। दूसरी तरफ सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में कैंसर की नैदानिक सेवा उच्च स्तरीय विशेषज्ञता की मांग करती है। हमारे देश में विशेषज्ञता प्राप्त डाक्टर जिला मुख्यालय को भी अपना परामर्श केंद्र बनाना पसंद नहीं करते हैं। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्रों में कैंसर के मानक उपचार की आशा करना आज बेमानी है। वैसे तो सरकार ने 1975 में ही कैंसर की बीमारी की रोकथाम के लिए एक राष्ट्रीय कार्यक्रम आरंभ कर दिया था। वर्ष 1990 में जिला स्तर पर कैंसर नियंत्रण कार्यक्रम भी शुरू हुआ और बाद में 2005 एवं 2017 में देश के 100 जिलों में उत्कृष्ट कैंसर संस्थान के लिए पहल हुई। इसके बावजूद कैंसर रोगियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। लाखों मरीज तो आरंभिक जांच के लिए भी चिह्नित नहीं हो पाते हैं और जिस तरह 55 प्रतिशत मरीज सालाना इस बीमारी से मर रहे हैं, वह बताता है कि हमारे देश में कैंसर की उपचारात्मक प्रविधियां नाकाम साबित हो रही हैं। जहां तक संसाधनों का सवाल है तो इस मामले में भी हम बहुत पिछड़े हुए हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रति 10 लाख की जनसंख्या पर एक रेडिएशन मशीन की आवश्यकता होती है, लेकिन हमारे यहां यह केवल 0.41 ही है। नेशनल मेडिकल काउंसिल के अनुसार, देश में कुल 594 एमडी रेडिएशन ओंकोलाजी की पीजी सीट्स हैं, जिनमें 282 निजी कालेजों में हैं। जाहिर है, जिस तरह से कैंसर की चुनौती तेज हो रही है, उस अनुपात में हमारे पास दक्ष कार्यबल नहीं है। ऐसा नहीं है कि सरकार इस चुनौती को समझ नहीं रही है, हरियाणा के झज्जर में एक राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र की स्थापना इसी उद्देश्य से की जा रही है, ताकि इससे संबंधित शोध और डाटा को ज्यादा प्रामाणिक बनाया जा सके।

कैंसर यूनिट की स्थापना : केंद्र और राज्य सरकारों ने कैंसर को विलंब से ही सही, अपनी प्राथमिकताओं में लेना शुरू भी किया है। पिछले कुछ वर्षों में सरकारी जिला अस्पतालों में कैंसर यूनिट की स्थापना आरंभ हुई है। मेडिकल कालेजों में भी रोग की पहचान, परीक्षण और निदान के संस्थागत प्रयास हुए हैं। लेकिन सबसे बड़ी समस्या कैंसर उपचार का अत्यधिक महंगा होना और इस रोग के आरंभिक लक्षणों का बहुत देर से पता चल पाना है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि फील्ड ड्यूटी के स्तर पर अभी भी काबिल डाक्टर उपलब्ध नहीं हैं और सरकार ने जिन सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्रों पर जांच के लिए उपकरण उपलब्ध कराएं हैं, उन्हें संचालित करने के लिए एलाइड सर्विसेज की भारी कमी है। अधिकतर सरकारी अस्पतालों एवं नए मेडिकल कालेजों में उपकरण तो खरीद कर स्थापित कर दिए गए हैं, लेकिन मानव संसाधन के अभाव में ये अनुपयोगी साबित हो रहे हैं।

दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है जागरूकता की कमी। कैंसर को लेकर संचारी रोगों की तरह जागरूकता नहीं है। सरकार को चाहिए कि अन्य बीमारियों की तरह इसे लेकर भी माइक्रो स्तर पर जागरूकता सुनिश्चित करने वाले राष्ट्रव्यापी अभियान आरंभ किए जाएं, ताकि आरंभिक लक्षणों के साथ ही कैंसर के शरीर में प्राणघातक फैलाव को रोका जा सके। एक हालिया अध्ययन से पता चला है कि यदि आरंभिक स्तर पर ही कैंसर की पहचान कर निदान शुरू किया जाए तो एशिया में लगभग 60 प्रतिशत मौतों को रोका जा सकता है। इसके साथ ही आयुष्मान समेत अन्य बीमा योजनाओं को कैंसर के मामले में समावेशी बनाया जाए। निजी बीमा कंपनियां अक्सर स्वास्थ्य बीमा करते समय कैंसर की अनदेखी करती हैं। आयुष्मान में केवल पांच लाख रुपये तक बीमा कवरेज है, लेकिन आम तौर पर मरीजों का उपचार इससे अधिक रकम में होता है। ऐसे में आयुष्मान योजना भी कैंसर पीड़ितों को अंतिम रूप से मदद नहीं कर पा रही है। महिलाओं के लिए भारत में सर्वाइकल कैंसर सबसे बड़ी चुनौती है, इसका उपचार आसान हो सकता है यदि 14 साल तक की बालिकाओं में पाठ्यक्रम स्तर पर जागरूकता सुनिश्चित की जाए। कैंसर फैलाव वाले कारकों पर सख्ती इसकी रोकथाम हेतु कारगर साबित हो सकती है। दक्ष मानव संसाधन खासकर संबद्ध सेवाओं को विकसित करने के लिए भी चरणबद्ध ढंग से मेडिकल कालेजों को केंद्र बना सकती है।

तंबाकू के बढ़ते उपयोग पर नियंत्रण

योगेश कुमार गोयल

विश्व स्वास्थ्य संगठन सहित अनेक संस्थाएं दुनियाभर में तंबाकू मुक्त भविष्य पर काम कर रहे हैं। वहीं तंबाकू उत्पादक कंपनियां भविष्य के लिए ज्यादा से ज्यादा लोगों को नशे की लत लगाने के लिए भ्रामक विज्ञापन और लुभावनी मार्केटिंग पालिसी से अपनी ओर आकर्षित करने के लिए प्रयासरत हैं। डब्ल्यूएचओ और वैश्विक तंबाकू उद्योग पर नजर रखने वाली एक संस्था ने अपनी एक रिपोर्ट में बताया है कि तंबाकू और निकोटिन उद्योग किस प्रकार अपने उत्पादों को डिजाइन करता है, मार्केटिंग अभियानों को लागू करता है, उनकी मदद के लिए ऐसे नीतिगत वातावरण को आकार देने के लिए लगातार काम करता है, जो दुनियाभर के युवाओं को नशे की लत में डुबो देते हैं। तंबाकू और निकोटिन उत्पादों से होने वाली बीमारियों के कारण प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में लोग मर रहे हैं।

हालांकि तंबाकू के उपयोग को कम करने की दिशा में बीते वर्षों में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, लेकिन इसके बावजूद चिंता का विषय यही है कि किशोरों में तंबाकू उत्पादों का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक स्तर पर 13-15 वर्ष की आयु के अनुमानित 3.7 करोड़ बच्चे किसी न किसी रूप में तंबाकू का उपयोग करते हैं।

जहां तक भारत की बात है तो विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इसी साल अपनी नई रिपोर्ट 'ग्लोबल रिपोर्ट आन ट्रेंड्स इन प्रीवलेंस आफ टोबैको यूज 2000-2030' में बताया है कि भारत सहित दुनियाभर में तंबाकू का सेवन करने वालों की संख्या में कमी आई है। हालांकि अभी भी देश में 15 वर्ष तथा उससे अधिक आयु के 25.1 करोड़ लोग इसका सेवन कर रहे हैं, जिनमें 79 प्रतिशत पुरुष तथा 21 प्रतिशत महिलाएं शामिल हैं। देश में खैनी का सेवन करने वालों की संख्या 11 करोड़ से ज्यादा है, जबकि गुटखे का सेवन सात करोड़ से ज्यादा और तंबाकू के साथ सुपारी का सेवन पांच करोड़ से ज्यादा लोग करते हैं। शोधकर्ताओं का मानना है कि हमारे यहां सिगरेट-बीड़ी की तरह नाबालिगों को तंबाकू उत्पाद बेचने के कानून उतने कड़े नहीं हैं, जितने होने चाहिए। कानूनी प्रतिबंधों के बावजूद स्कूलों के पास भी ये आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। हमारे नीति निर्माता यदि इस दिशा में कार्रवाई नहीं करते हैं तो वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों को नुकसान की एक नई लहर का सामना करना पड़ सकता है, जिसमें सिगरेट सहित कई तंबाकू और निकोटिन उत्पादों की लत और उपयोग शामिल है। कल यानी 31 मई को विश्व तंबाकू निषेध दिवस के रूप में मनाया जाता है, लिहाजा इस ओर हमें ध्यान देना होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

खरी-खरी

पहले मतदान, फिर...

विनोद कुमार विक्की

'क्या भाई दीनू, दे दिये न भैयाजी को वोट?' भैयाजी के पार्टी कार्यकर्ता दयाल ने वोट डाल कर घर वापस लौट रहे दीनू दंपति को चौराहे पर रोकते हुए पूछा।

'हां, हां, दयाल बाबू, भैयाजी को ही वोट देकर आ रहे हैं। मतदान से पहले वोट की खातिर एक हजार रुपये और एक बोतल दिये थे।'

'ठीक है, तुम घर जाओ, जगेश्वर भी लौट रहा होगा वोट देकर, उससे भी पूछताछ करनी है।'

दीनू के वहां से निकलते ही दयाल साथी कार्यकर्ताओं से फुसफुसाते हुए बोला, 'अच्छा मूर्ख बनाया दिनवा को, भैयाजी ने एक वोट के बदले एक हजार रुपया और अंग्रेजी बोतल बांटने को कहा था और हमने पांच सौ रुपया और दो सौ रुपये वाले पौवा में ही निपटा दिया।'

दयाल की बात पूरी होने तक मतदान कर लौट रहे जगेश्वर को रामप्रवेश ने घेरते हुए पूछा, 'क्या जगेसर, किस पर बटन दबाए?'

उधर घर लौट रहे दीनू को रास्ते में टोकते हुए उसकी पत्नी ने पूछा, 'क्या जी, आपने तो हमको आलमारी छाप पर वोट डालने को कहा था और स्वयं पंखा छाप पर बटन दबा दिया।'

'अरी, ना रे भाग्यवान, हम भी आलमारी छाप का ही बटन दबाए हैं। दरअसल यह नेतवन सब हम लोगों से पैसा के बदले वोट खरीद कर पांच वर्षों तक हम लोगों को मूर्ख बनाकर ऐश करते रहते हैं। इस बार हमने इन्हें मूर्ख बनाया है, पैसा और बोतल तो लिये कई नेताओं से, लेकिन वोट दिए आलमारी छाप वाले ईमानदार प्रत्याशी को। हर बार जनता का पाला नेता से पड़ता है, इस बार नेता का पाला हमारे जैसी जनता से पड़ा है। हर बार पहले मतदान तब जलपान करते थे, इस बार पहले मतदान और अब घर पहुंच कर उनका दिया हुआ मदिरापान करेंगे।' दीनू ने पत्नी की जिज्ञासा को शांत करते हुए स्थिति स्पष्ट की।

'लेकिन, चुनाव हारने के बाद यदि बलजोरी हमसे पूछेंगे, तब क्या जवाब दोगे जी?' दीनू की पत्नी ने पूछा।

'अरे हमलोगों पर कभी भी शक नहीं करेंगे, क्योंकि इन लोगों को पता है कि हमलोग पैसा, बोतल आदि लेकर उन्हें ही वोट देते हैं और जिताते हैं।'

पोस्ट

ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरण के बारे में लोगों की उदासीनता के नतीजे अब दिख रहे हैं, लेकिन मुझे नहीं लगता कि हमारे यहां जनता और सरकारों में कोई चिंता जगेगी। कमर वहीद नकवी@qwnaqvi

भले ही चुनावी नतीजे चार जून को आएंगे, लेकिन एक चुनाव का परिणाम पहले ही घोषित हो चुका है। वह यह कि जम्मू-कश्मीर में भारत को बहुत बड़ी जीत मिली है, जहां मतदान ने 35 वर्षों के रिकार्ड को तोड़ दिया है। एमजे अकबर@mjakbar

आम चुनाव में कौन जीतेगा, इस बारे में इतना अधिक कयास लगाने का कोई मतलब नहीं है। हालत यह है कि इसे ही चुनाव विश्लेषण का पर्याय बना दिया गया है, लेकिन यह बैठे-ठालों का मनोरंजन भर है। अनुमानों एवं अटकलों का खेल, जो तुक्केबाजी ज्यादा है।

आनंद प्रधान@apradhan1968

राजनीति और समाज में सक्रिय कई मित्र बीते कुछ वर्षों से यह कहते रहे कि जातिवाद खत्म हो गया है और अब गरीब एवं अमीर दो ही जातियां बची हैं। इस चुनाव को देख यही लगता है कि ऐसा कहने वाले लोग या तो झूठ बोल रहे थे, सच छुपा रहे थे या फिर उन्हें सच का पता ही नहीं था।

श्यामलाल यादव@RTIExpress

जागरण जनमत

कल का परिणाम

आइएनडीआइए की बैठक से तृणमूल का किनारा विपक्षी एकता के लिए झटका है?

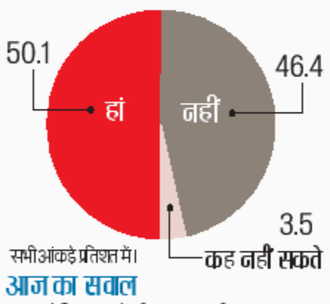

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या रेटिंग एजेंसी एसएंडपी द्वारा भारत को लेकर बेहतर आउटलुक से भारतीय अर्थव्यवस्था की साख बढ़ेगी?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

राहत मिलने से रही जाना होगा जेल,
बंधु बहुत दिन कर लिया राजनीति का खेल।
राजनीति का खेल जमानत नहीं बढ़ेगी,
उम्मीदें परवान 'आप' की नहीं चढ़ेंगी।
निश्चित ही श्रीमान आप तो होंगे आहत,
लेकिन बारम्बार मिलेगी कैसे राहत!

- ओमप्रकाश तिवारी

संजय मिश्र
स्थानीय संपादक,
नवदुनिया, भोपाल

मध्य प्रदेश डायरी

कांग्रेस के सामने बड़ी चुनौतियां

मध्य प्रदेश में विधानसभा के बाद लोकसभा का चुनाव भी संपन्न हो चुका है। विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने अपने तत्कालीन प्रदेश अध्यक्ष कमल नाथ के नेतृत्व में जोरदार प्रचार अभियान चलाया, लेकिन उसके अनुमान के विपरीत मिली करारी हार ने उसे सन्नाटे में ला दिया। कांग्रेस हाई कमान को ऐसा बड़ा झटका लगा कि कमल नाथ से उसके समीकरण ही बिगड़ गए। एक झटके में राज्य में कांग्रेस का नेतृत्व कमल नाथ से बदलकर पूर्व मंत्री जीतू पटवारी के हाथ में दे दिया गया। नेता प्रतिपक्ष पद पर आदिवासी समाज के उमंग सिंघर को बैठा दिया गया। संकेत दिया गया कि इस बदलाव के जरिये कांग्रेस स्वयं को जमीनी स्तर पर मजबूत करने के साथ ही युवा नेतृत्व भी खड़ा करना चाहती है। जीतू पटवारी ने पदभार संभालने के बाद जब तक भाजपा सरकार पर हमले तेज किए, तब तक लोकसभा चुनाव की घोषणा हो गई। चाहकर भी वह तत्काल अपनी टीम तैयार नहीं कर सके। राज्य संगठन की पुरानी टीम के भरोसे ही चुनाव अभियान में जाना पड़ा। चुनाव के बीच में ही कई नामचीन नेताओं ने दल बदल कर भाजपा की सदस्यता लेकर कांग्रेस के सामने मुश्किलें खड़ी कर दीं। चुनाव अभियान में यह दिखा भी कि कांग्रेस नेतृत्व ने एक तरह से राज्य के नेताओं पर ही प्रचार का दारोमदार छोड़ दिया था। ऐसी स्थिति में कांग्रेस ने किसी तरह लोकसभा चुनाव तो लड़ लिया, लेकिन राज्य में अब भी उसके सामने चुनौतियों का पहाड़ खड़ा है। फिलहाल पहली चुनौती राज्य में नए सिरे से अपना संगठन खड़ा करने की है। लोकसभा चुनाव के दौरान विभिन्न क्षेत्रों के बड़ी संख्या में कांग्रेस के नेता और कार्यकर्ता दल छोड़कर भाजपा में जा चुके हैं। ऐसे में संगठन को मजबूत करना और खेमों में बंटी कांग्रेस को एकजुट करना नए नेतृत्व के लिए आसान काम नहीं होगा।

जीतू पटवारी फाइल

कांग्रेस ने लगभग छह माह पहले विधानसभा का चुनाव कमल नाथ के नेतृत्व में लड़ा था। उन्होंने अपने हिसाब से टिकट बांटे और चुनाव अभियान संचालित किया। पूरा वन मैन शो हुआ। जब नतीजे आए तो हार के लिए दोषी भी वे ही ठहराए गए। राहुल गांधी की नाराजगी के चलते उन्हें पद से हटा दिया गया। विधानसभा चुनाव हारने के बाद जीतू पटवारी को प्रदेश संगठन की कमान सौंप दी गई। राहुल से जुड़े पटवारी ने मोर्चा संभाला और हार से हताश कार्यकर्ताओं को संघर्ष के लिए तैयार करने में जुटे। इसमें कुछ हद तक सफलता भी मिली, लेकिन वरिष्ठ नेताओं का जिस तरह साथ मिलना चाहिए, वैसा नहीं मिला। अनेक नेता दल छोड़कर झटके पर झटका देते रहे। कमल नाथ ने भी स्वयं को अपने पुत्र नकुल नाथ के संसदीय क्षेत्र छिंदवाड़ा में सीमित कर लिया। अलबत्ता पहले चरण का चुनाव होने के बाद उन्होंने केवल होशंगाबाद और बैतूल संसदीय क्षेत्र में तीन सभाएं कीं। यही स्थिति दिग्विजय सिंह की भी रही। वह अपने संसदीय क्षेत्र राजगढ़ में ही उलझे रहे।

चौंकाने वाली बात यह भी है कि कांग्रेस के केंद्रीय नेतृत्व ने मध्य प्रदेश में चुनाव अभियान में वैसी तेजी नहीं दिखाई जिस तरह दक्षिण भारत के राज्यों में दिखाई थी। पार्टी के स्टार प्रचारकों में राहुल गांधी ने मध्य प्रदेश में केवल पांच सभाएं कीं, जबकि प्रियंका गांधी वाड्रा और राष्ट्रीय अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने एक-एक सभा की। राजस्थान के पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत और उप मुख्यमंत्री सचिन पायलट राजगढ़ संसदीय क्षेत्र में दिग्विजय सिंह के पक्ष में प्रचार करने के लिए पहुंचे। दूसरी तरफ भाजपा ने प्रत्येक चरण में स्टार प्रचारकों की पूरी फौज उतार दी। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी स्वयं प्रत्येक चरण में प्रचार करने के लिए पहुंचे। उन्होंने 14 सभाएं एवं रोडशो किए। केंद्रीय मंत्री राजनाथ सिंह, अमित शाह, स्मृति ईरानी, अनुराग ठाकुर, भाजपा अध्यक्ष जेपी नड्डा से लेकर अन्य वरिष्ठ नेताओं ने अनेक रोड शो और सभाएं कीं। मुख्यमंत्री डा. मोहन यादव ने सर्वाधिक सभाएं एवं रोड शो किए। प्रदेश भाजपा अध्यक्ष विष्णु दत्त शर्मा, पूर्व मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान समेत अन्य नेताओं ने दर्जनों सभाएं कीं। चुनाव के परिणाम कुछ भी आएं, लेकिन सच यह है कि कांग्रेस के सामने चुनौतियों का पहाड़ खड़ा है। उसे अपना संगठन खड़ा करना है, जो फिलहाल शिथिल पड़ा है। जीतू पटवारी भी इसे बखूबी समझ रहे हैं। यही कारण है कि संगठन के पुनर्गठन की कोशिश में जुटे हैं। इसकी शुरुआत 15 जून से होने जा रही है। पटवारी ने संकेत दिया है कि 50 प्रतिशत से अधिक पद युवाओं को दिए जाएंगे तो वरिष्ठ नेताओं के अनुभव का लाभ लेने के लिए भी एक व्यवस्था बनाई जाएगी।

हिमाचल प्रदेश डायरी

पहाड़ में प्रचार, वार-प्रतिकार

नवनीत शर्मा
राज्य संपादक,
हिमाचल प्रदेश

संसदीय चुनाव के सातवें चरण के लिए प्रचार आज थम जाएगा। हिमाचल प्रदेश ने ढाई महीने तक देश में संसदीय चुनाव प्रक्रिया को पहाड़ पर बैठ कर देखा है। पर्वतीय प्रदेश में चुनाव इस बार कुछ अलग इसलिए है, क्योंकि चार संसदीय क्षेत्रों के साथ ही छह विधायी क्षेत्रों में उपचुनाव भी हो रहा है। मुख्य भोज चार सीटें हैं, किंतु उपचुनाव वाली छह सीटें उस सलाद की तरह हैं जिनसे भोजन का आनंद ही नहीं बढ़ता, स्वास्थ्य के लिए अन्य आवश्यक तत्व भी मिलते हैं। सत्तारूढ़ कांग्रेस और विपक्षी भाजपा दोनों को राजनीतिक प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए इस सलाद की आवश्यकता है।

बात लोकसभा चुनाव की। अंतिम 15 दिनों में भाजपा और कांग्रेस के बड़े नेताओं ने प्रदेश की जनता को संबोधित किया है। मुद्दों के चयन से भी पता चलता है कि कौन क्या सोच रहा है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने शिमला और मंडी में सभाएं की, क्योंकि माना जा रहा था कि कांगड़ा की तरह शिमला में भी प्रत्याशी बदला जाना उचित रहता, पर बदला नहीं। मंडी में अचानक प्रत्याशी बनीं कंगना रनौत उस पौधे की तरह समझी गईं जिसे पार्टी की मिट्टी के साथ अन्य पोषक तत्वों की जरूरत थी। प्रधानमंत्री हिमाचल में रहे हैं, सो स्थनीय कनेक्ट के साथ उनके मुद्दे चीन से सटे क्षेत्रों का विकास, श्रीराम मंदिर, नारी सशक्तीकरण, वन रैंक वन पेंशन, पिछड़ों के आरक्षण पर किसकी दृष्टि है आदि रहे। प्रधानमंत्री ने सामान्य से अधिक जोर देकर यह कहा कि दलाई लामा के साथ उनके अच्छे संबंध हैं और कांग्रेस तो डर कर तिब्बती धर्मगुरु से बात तक नहीं करती थी।

बहुत लोगों को लगा कि प्रधानमंत्री ने बहुत कम संख्या वाले तिब्बती मतदाताओं को क्यों छूआ या उन्होंने कंगना रनौत की दलाई लामा के साथ गलतफहमी वाले प्रकरण पर पानी डाला है। संभव है ऐसा हुआ हो, पर केवल यही हुआ, ऐसा सोचना एकांगी विश्लेषण है। वास्तव में विमर्श उससे आगे है। प्रधानमंत्री का संकेत चीन से न डरने और कांग्रेस के हमेशा डरते रहने का था। बात तिब्बती मतदाताओं की नहीं है, जिनकी संख्या धर्मशाला में ही आठ सौ के करीब है। चीनी आक्रमण हो, तिब्बत की निर्वासित सरकार के साथ संबंधों पर बीजिंग की छाया हो या चीन से सटे क्षेत्रों का विकास हो, प्रधानमंत्री का संकेत इस ओर था। मंगलवार को शिमला में बौद्ध के एक सम्मेलन में विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने कहा कि यूपीए ने जितना बजट चीन सीमा के विकास के लिए रखा था, उससे चार गुणा से भी अधिक बजट मोदी सरकार ने रखा है, तो इसका कोई अर्थ है। जयशंकर चीन में छह वर्ष बिता चुके हैं, कई पदों पर रहते हुए चीन को समझ चुके हैं। प्रधानमंत्री ने जो नहीं कहा, वह यह भी था कि कांग्रेस कार्यकाल में रक्षा मंत्री ए. के. एंटनी ने राज्यसभा में स्वयं माना था कि चीन से सटे क्षेत्रों का विकास न करना उनकी सरकार का नीतिगत विषय है। इसे ही भाजपा नेता इस रूप में कहते हैं कि कांग्रेस की सरकारें डरती थी कि सीमाक्षेत्र में विकास किया तो शत्रु हमारे ढांचे का उपयोग कर लेगा। राजग के कार्यकाल में वाइब्रेंट विलेज योजना से उन क्षेत्रों और लोगों की तकदीर बदली है, यह स्थानीय लाभ है, किंतु रणनीतिक लाभ यह है कि देश सुरक्षित हुआ है।

अमित शाह ने राजग के आख्यान को दोहराया, लेकिन वह उस बिंदु पर अलग से स्पष्टीकरण दे गए जिसे कांग्रेस ने बड़ा मुद्दा बनाया है। अग्निवीर योजना। शाह ने बिंदुवार समझाया कि कैसे यह योजना अच्छी है। उन्होंने यह भी जोड़ा कि सच को तोड़ मरोड़ दें, यह दलों के लिए नई बात नहीं, किंतु झूठ ही परोसने पर आ जाए, यह गलत है।

कांग्रेस के प्रचारकों में राहुल और प्रियंका ही शीर्ष पर रहे। दादी के साथ हिमाचल प्रदेश के कनेक्ट को राहुल के बजाय प्रियंका अधिक भावनात्मक ढंग से बयान करती हैं। राहुल शिमला और हमीरपुर संसदीय क्षेत्र में आए जबकि प्रियंका अब हिमाचलवासी हैं, वह कई स्थानों पर गईं। राहुल गांधी ने हिमाचल प्रदेश की भूमि को मीडिया को कोसने में प्रयोग करते हुए महिलाओं को 8500 रुपये प्रतिमाह देने का वादा किया। साथ ही कहा कि यदि मीडिया ने शोर मचाया तो उनकी सरकार यह राशि दोगुनी कर देगी। उनका यह कहना किसी को चौंकाएगा, कह नहीं सकते क्योंकि वह सहज दिखना चाहते हैं। इसके लिए कितने भी असहज क्यों न हो जाएं। वह स्वयं गाड़ी चला हेलीकाप्टर तक जा सकते हैं, हिमाचली टोपी सामने के बजाय, पीछे से पहन सकते हैं।

मंडी के पड्डल मैदान में एक जनसभा को संबोधित करते प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी। फाइल

बहरहाल, इससे कुछ तो समझा ही जा सकता है कि भाजपा का जोर मंडी, शिमला पर, जबकि कांग्रेस का जोर हमीरपुर और कांगड़ा पर क्यों रहा। मंडी में जगत प्रकाश नड्डा और नितिन गडकरी भी आए। अब बात छह उपचुनाव वाली सीटों की। भाजपा के प्रत्याशी वही हैं जो कांग्रेस के विधायक थे, जिन्होंने अभिषेक मनु सिंघवी का राज्यसभा जाना रद करवा दिया था। मुख्यमंत्री सुखविंदर सिंह सुक्खू हर हलके में जा रहे हैं, पर उनका विशेष जोर धर्मशाला, सुजानपुर और बड़सर पर है, जहां क्रमशः सुधीर शर्मा, राजेंद्र राणा और इंद्र दत्त लखनपाल भाजपा प्रत्याशी हैं। कांग्रेस को लगता है कि उसे कुटलैहड़, लाहुल-स्पीति और गगरेट में अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं है। मुख्यमंत्री से लेकर राहुल गांधी तक सब भाजपा पर सरकार चुराने का आरोप लगाते हैं, जबकि मोदी से लेकर अमित शाह तक सब यह कह गए हैं कि डरो मत, यह सरकार अधिक दिन नहीं रहेगी। क्या होगा, क्या नहीं यह पता चार जून को चलेगा। शायद उसके बाद ही हिमाचल प्रदेश के धधकते जंगलों की आग पर सबका ध्यान जाएगा, पानी की कमी पर ध्यान जाएगा, परंपरागत जलस्रोतों की बात याद आएगी।

****

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का 75 निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक स्थापना वर्ष : 1948

> सबसे मुश्किल काम है सोचना। शायद यही कारण है कि इसमें इतने कम लोग लगे होते हैं। - हेनरी फोर्ड

पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री अगर पहली बार स्वीकार रहे हैं कि इस्लामाबाद ने कारगिल युद्ध की शुरुआत कर भारत के साथ हुए लाहौर समझौते का उल्लंघन किया था, तो गनीमत है। अब देखना होगा कि यह महज एक सियासी बयान है या वाकई वह अपनी गलतियों से सीखकर आगे बढ़ना चाहते हैं।

सिर्फ बात से बात नहीं बनती

पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री नवाज शरीफ द्वारा पहली बार आधिकारिक तौर पर यह स्वीकारा जाना कि इस्लामाबाद ने कारगिल युद्ध की शुरुआत कर भारत के साथ हुए लाहौर घोषणापत्र का उल्लंघन किया था, पाकिस्तान के विश्वासघात को ही दर्शाता है और अगर 25 साल बाद उन्हें अब इसकी याद आ रही है, तो इसके पीछे उनकी मजबूरी भी समझी जा सकती है। शरीफ ने जिस लाहौर घोषणापत्र का जिक्र किया है, वह दरअसल भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी और उनके मध्य 21 फरवरी, 1999 को हस्ताक्षरित हुआ था, जिसमें दोनों देशों के बीच शांति और स्थिरता की बात तो थी ही, इसे दोनों मुल्कों के बीच संबंधों में एक बड़ी सफलता भी माना जा रहा था। लाहौर घोषणा से दोनों देशों के बीच एक ऐसा वातावरण बना था, जिसमें वैमनस्य को दफनाने की दिशा में गंभीर प्रयास भी शुरू हो गए थे और ऐसा लगने लगा था कि दोनों देशों के बीच 52 वर्षों से कायम खाई अब पटने लगी है। लेकिन कुछ ही महीनों बाद कारगिल में पाकिस्तानी फौज की घुसपैठ की कोशिश के चलते शुरू हुए कारगिल युद्ध ने लाहौर घोषणा के उपरांत बने विश्वास को तो प्रबल आघात पहुंचाया ही, दोनों देशों के बीच वार्ता की सभी संभावनाओं पर भी विराम लगा दिया। इसके बाद भी वर्ष 2001 में भारतीय संसद पर हमले और 2008 में मुंबई पर हुए हमले के अलावा वर्षों से जम्मू-कश्मीर में आतंकवादियों की घुसपैठ को पाकिस्तान ने जिस तरह से समर्थन देना जारी रखा है और हाल ही में पुंछ में पिछले पांच महीनों में तीसरी बार सैन्य वाहनों को निशाना बनाया है, उससे यह और भी साफ हो गया है कि मित्रता की किसी भी कोशिश की छाया में पाकिस्तान के नापाक इरादों के प्रति थोड़ा भी भ्रम में रहना आत्मघाती हो सकता है। उल्लेखनीय है कि इतने अरसे के बाद नवाज शरीफ को एकाएक अपनी गलती अकारण ही नहीं दिख रही है। पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था बदहाली के चरम पर पहुंच चुकी है। पहले से कर्ज में डूबे पाकिस्तान को अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष से अरबों डॉलर की मदद तो मिल रही है, लेकिन उसकी कड़ी शर्तों का बोझ अंततः जनता पर ही पड़ रहा है। जनता के विरोध की झलक हाल ही में पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर (पीओके) में भी दिखी थी, जहां करों में वृद्धि और रोजमर्रा की चीजों की आसमान छूती कीमतों को लेकर स्थानीय लोग सरकार के खिलाफ लामबंद हुए थे। हम अपने दुश्मन तो चुन सकते हैं, पर पड़ोसी नहीं। ऐसे में नवाज शरीफ द्वारा अपनी गलती को स्वीकार लेना गनीमत की बात है। लेकिन अब देखना यह होगा कि यह महज एक बयान है या वह वाकई अपनी गलतियों से सीखकर आगे बढ़ना चाहते हैं।

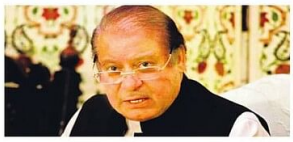

यह पूरे तंत्र की विफलता है

देश में हर साल आग लगने की दुर्घटनाओं में हजारों लोगों की जानें जाती हैं। हर बार जांच होती है और हर बार इसके पीछे घोर लापरवाही और नियमों के उल्लंघन की बात कही जाती है। ये अग्निकांड पूरे तंत्र की विफलता को दर्शाते हैं, जिनसे निपटने के लिए केंद्र व राज्य, दोनों स्तरों पर सम्मिलित प्रयास जरूरी हैं।

कैप्टन एसके द्विवेदी
सेवानिवृत्त प्रशासनिक अधिकारी

बीते 25 मई को गुजरात के राजकोट में गेमिंग जोन में आग लगने से बच्चों समेत 32 लोगों की मौत हो गई। राज्य सरकार ने एसआईटी गठित कर जांच शुरू कर दी है। राज्य के मुख्यमंत्री भूपेंद्र पटेल ने मृतकों के परिवार को चार लाख रुपये और घायलों को 50,000 रुपये की सहायता राशि देने की घोषणा की है। 25 मई की रात ही दिल्ली में आग लगने की दो अलग-अलग घटनाएं हुईं। विवेक विहार में बच्चों के अस्पताल में आग लगने से सात नवजात शिशुओं की मौत हो गई और पांच अन्य घायल हो गए। इसके अलावा, कृष्णानगर में एक इमारत में करीब दो बजे सुबह आग लगी, जिसमें तीन लोगों की जान चली गई और तीन अन्य लोग घायल हो गए। दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल ने अपनी संवेदना व्यक्त की और आश्वासन दिया कि घटनाओं के कारणों की जांच की जा रही है, ताकि जिम्मेदार लोगों को जवाबदेह ठहराया जा सके।

घनी आबादी और भीड़भाड़ वाले इलाकों में तंग बुनियादी ढांचे के कारण भारत के शहरी क्षेत्र आग लगने जैसी घटनाओं के लिए विशेष रूप से असुरक्षित हैं। जैसे कि वर्ष 2018 में मुंबई के ईएसआईसी कामगार अस्पताल में आग लगी और 2019 में सूरत कोचिंग सेंटर में आग लगने से 22 छात्रों की मौत हो गई।

ये घटनाएं बताती हैं कि अतीत की त्रासदियों से पूरी तरह सबक नहीं लिया गया। अतीत में हुए सबसे दुखद उपहार सिनेमा अग्निकांड और भोपाल गैस त्रासदी ने प्रणालीगत सुधारों की जरूरत और उपेक्षा के गंभीर परिणामों को उजागर किया। औद्योगिक सुरक्षा चूक की कई घटनाएं हुई हैं, जो मजबूत शासन और सख्त सुरक्षा नियमों की तत्काल जरूरत को रेखांकित करती हैं।

उपहार सिनेमा अग्निकांड एक ऐसी त्रासदी थी, जिसे रोका जा सकता था। 13 जून, 1997 को जब दिल्ली के उपहार सिनेमा में एक लोकप्रिय फिल्म प्रदर्शित हो रही थी, उसी समय खराब ट्रांसफार्मर के कारण आग

लग गई, जिसमें 59 लोगों की मौत हो गई और 100 से अधिक लोग घायल हो गए। ज्यादातर पीड़ित दम घुटने के कारण मरे, क्योंकि वे बालकनी वाले इलाके में निकास द्वार के बंद या बाधित होने के कारण फंस गए थे। अग्नि सुरक्षा से संबंधित उचित उपायों और आपातकालीन तैयारियों की कमी के कारण यह त्रासदी और भी गंभीर हो गई।

इस अग्निकांड की जांच में घोर लापरवाही और सुरक्षा उपायों का उल्लंघन पाया गया, जैसे कि बचकर भागने के रास्ते बंद थे और अग्निशमन उपकरण उचित रखरखाव के अभाव में खराब थे। उपहार सिनेमा अग्निकांड भवन संहिता (बिल्डिंग कोड) एवं अग्नि सुरक्षा उपायों के सख्त क्रियान्वयन की व्यापक आवश्यकता की याद दिलाता है। यह नियमों के अनुपालन में स्थानीय अधिकारियों की विफलता को भी उजागर करता है, जो शासन के व्यापक मुद्दों को रेखांकित करता है, जिससे केंद्र और राज्य, दोनों स्तरों पर निपटने की जरूरत है।

अग्निकांड से अलग प्रणालीगत विफलता का एक और उदाहरण है- भोपाल गैस त्रासदी। 1984 की भोपाल गैस त्रासदी औद्योगिक सुरक्षा की कमी का एक प्रमुख उदाहरण है, जिसके कारण बड़े पैमाने पर जनहानि हुई। भोपाल में यूनियन कार्बाइड कीटनाशक संयंत्र में मिथाइल आइसोसाइनेट गैस का रिसाव हुआ, जिसके कारण हजारों लोगों की तत्काल मृत्यु हो गई और पांच लाख से ज्यादा लोगों को लंबे समय तक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से जूझना पड़ा। यह त्रासदी खराब रखरखाव, अपर्याप्त सुरक्षा प्रोटोकॉल, आपातकालीन स्थितियों में तैयारी की कमी का नतीजा थी। इसके बाद लंबी कानूनी लड़ाइयां चलीं और पीड़ितों को देर से न्याय मिला। इस त्रासदी ने औद्योगिक संयंत्रों के संचालन में सुरक्षा मानकों को लागू करने और नियामक निगरानी के महत्व को उजागर किया। इसने लापरवाही के लिए कंपनियों को जिम्मेदार ठहराने और ऐसी आपदाओं को रोकने के लिए निवारक उपाय सुनिश्चित करने के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचे की आवश्यकता को भी प्रदर्शित किया।

इस तरह की भयावह घटनाओं के बावजूद हमारे देश के राज्यों में सुरक्षा एक महत्वपूर्ण चिंता बनी हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड्स ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों से पता चलता है कि हमारे देश में हर साल आग लगने की घटनाओं में हजारों लोगों की जान जाती है। बिजली के शॉर्ट-सर्किट, ज्वलनशील सामग्रियों का सही ढंग से भंडारण नहीं करने और सुरक्षा उपायों की उपेक्षा आग लगने के आम कारण होते हैं।

हमारे देश में आग के खतरों से निपटने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। *सुरक्षा उपायों को सख्ती से लागू करना*-राष्ट्रीय भवन संहिता और अग्नि सुरक्षा मानदंडों का सख्ती से पालन सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है। *नियमित निरीक्षण और गैर*-अनुपालन के लिए दंड का प्रावधान रहने से लापरवाही को रोका जा सकता है। *जन-जागरूकता और प्रशिक्षण*- नागरिकों को अग्नि सुरक्षा उपायों के बारे में शिक्षित करने तथा सार्वजनिक स्थानों पर नियमित मॉक ड्रिल (अभ्यास) करने से तैयारी बेहतर हो सकती है तथा मरने वालों की संख्या कम हो सकती है। *बुनियादी ढांचे में सुधार*-विद्युत अवसंरचना का आधुनिकीकरण और सुरक्षित निर्माण सुनिश्चित करने से आग लगने के सामान्य कारणों को कम किया जा सकता है। *आपातकालीन सेवाओं को सुदृढ़ बनाना*-प्रभावी आपदा प्रबंधन के लिए विशेष रूप से शहरी केंद्रों में, अग्निशमन विभागों की क्षमताओं और प्रतिक्रिया समय में सुधार करना आवश्यक है। *कॉरपोरेट जवाबदेही*- सख्त कॉरपोरेट प्रशासन मानकों को लागू करने और सुरक्षा उल्लंघनों के लिए कंपनियों को जवाबदेह ठहराने से औद्योगिक आपदाओं को रोका जा सकता है।

उपहार सिनेमा अग्निकांड और भोपाल गैस त्रासदी आग के खतरों और औद्योगिक सुरक्षा चूक के विनाशकारी प्रभाव की याद दिलाती हैं। इनसे निपटने के लिए न केवल विनियामक सुधार और नियमों को सख्ती से लागू करने की जरूरत है, बल्कि सुरक्षा उपायों और तैयारियों को प्राथमिकता देने की दिशा में सांस्कृतिक बदलाव भी जरूरी है। भविष्य की आपदाओं को रोकने और पूरे देश में जीवन की सुरक्षा के लिए प्रभावी शासन और सक्रिय उपाय महत्वपूर्ण हैं।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

कन्फ्यूशियस

जिसके पास जितना ज्यादा ज्ञान होगा, वह श्रेष्ठ गुणों के उतना ही करीब होगा। सीखना हर जगह और हर चीज का हिस्सा होना चाहिए। सीखने की निरंतर प्रक्रिया ही अच्छे जीवन की पहली शर्त है।

अच्छे जीवन की पहली शर्त है सीखते रहना

'जेन' का अर्थ है करुणा की भावना यानी दूसरों की भलाई के बारे में सोचना। जहां करुणा होगी, वहीं मनुष्य है। यदि किसी के पास 'जेन' है, तो इसका मतलब है कि उसमें गुण हैं, दूसरों के कल्याण के लिए अच्छी भावनाएं हैं। और किसी के पास गुण होने का मतलब यह है कि वह अच्छा जीवन जीने की सबसे पहली आवश्यक शर्त तक पहुंच गया है। यह शर्त इसलिए अनिवार्य है, क्योंकि जब तक हम किसी के बारे में अच्छी भावना, अच्छा विचार नहीं रखेंगे, तो उसके कल्याण के बारे में सोच कैसे पाएंगे! दूसरों के कल्याण के बारे में सोचना ही मनुष्य होने का पहला प्रमाण है। इसलिए समाज के भीतर और अपने सामाजिक संबंधों के दायरे में सबसे पहले 'जेन' को लाना होगा। यही ऐसी पहली शर्त या अवधारणा है, जो हमें एक अच्छे जीवन की ओर प्रवृत्त करती है, और अच्छे जीवन से ही अच्छे समाज का निर्माण होता है।

मनुष्य को 'जेन' को आत्मसात करते हुए ही अपनी हर गतिविधि को परोपकार, कर्तव्य, अंतर्ज्ञान और विश्वास जैसे गुणों के अनुसार संचालित करना चाहिए। इसी से हर व्यक्ति अपने गुणों की कसौटी पर खरा उतर सकता है और अच्छे जीवन का रस ले सकता है। अच्छा जीवन जीने के लिए सद्गुणों का विकास कैसे करें? अपने भीतर सद्गुणों का विकास करना न तो कठिन है, न असंभव। यह तो एक प्रक्रिया है, जिससे हमें गुजरना होता है। सबसे पहले हमें अपने को सीखने की प्रक्रिया में लाना होगा। सीखने का यह प्रयास व्यापक स्तर पर होना चाहिए। साथ ही, एक ईमानदार और ठोस लक्ष्य रखना होगा और फिर आत्म-प्रयोग के साथ यह चिंतन करना होगा कि मैं जो कर रहा हूं, उसमें कितनी ईमानदारी और सच्चाई है? जो लक्ष्य मैंने निर्धारित किया, क्या उसी दिशा में मैं सही-सही बढ़ रहा हूं? अगर वाकई हम इस सच्चाई पर खरे उतरते हैं, तो हम सद्गुण की दिशा में बढ़ रहे होते हैं। सद्गुण इसी दिशा में है। इसीलिए सीखने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण सद्गुण के केंद्र में होता है, जिसके पास जितना ज्यादा ज्ञान होगा, वह सदगुण के उतना ही करीब होगा। सीखना हर जगह और हर चीज का हिस्सा होना चाहिए। सीखने की निरंतर प्रक्रिया ही अच्छे जीवन की पहली शर्त है। सीखने के प्रति प्यार के बिना अगर परोपकारी बनने का प्यार है, तो यह एक मूर्खतापूर्ण सरलता की ओर ले जाता है। सीखने के बिना जानने का प्रेम है, तो इससे मन नष्ट हो जाता है। सीखने के प्यार के बिना सीधेपन का प्यार अशिष्टता और पाखंड की ओर ले जाता है। जो व्यक्ति जितना अधिक सीखता है, उतना ही उसका जीवन अच्छा होता है। अच्छा जीवन और समाज, दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं। लोगों का जीवन अच्छा होगा, तो अच्छे समाज का निर्माण होगा और जब समाज अच्छा होता है, तो उसके नागरिक भी आदर्श होते हैं।

अच्छा जीवन

सूत्र

अच्छे जीवन के लिए समाज में हमारी सक्रिय भागीदारी होनी चाहिए। निष्क्रिय जीवन कभी लक्ष्यों तक नहीं पहुंचाता। सकारात्मक कार्य और चीजों के बारे में सोचना व्यक्ति को अच्छे जीवन के लिए सक्षम बनाते हैं। जब हम एक सरल, सामान्य और तर्कसंगत जीवन जीते हैं, तो हम खुशी का जीवन जी सकते हैं। हर व्यक्ति अपने गुणों की कसौटी पर खरा उतर सकता है और अच्छे जीवन का रस ले सकता है।

दूसरा पहलू

ऑस्ट्रेलिया के कई शहर ऐसे हैं, जहां लोगों को पर्याप्त भोजन नहीं मिल पाता है, इनमें से एक क्षेत्र है लाजामानु।

भोजन के लिए तरसते ऑस्ट्रेलिया के शहर

मध्य ऑस्ट्रेलिया में गाड़ी चलाना आसान नहीं है, क्योंकि यहां कदम-कदम पर धूल, बाढ़, आग, ध्वस्त सड़कों और नेटवर्क की कमी से जूझना पड़ता है। और जब गाड़ी में खाने-पीने की चीजें भरी हों, तब बेहद सावधानी बरतनी पड़ती है। ऑस्ट्रेलिया सरकार ने स्थानीय समुदाय के लिए वर्ष 1949 में उत्तरी इलाके के लाजामानु में स्वायत्त क्षेत्र का गठन किया था। बाद में दूसरे समुदायों के अनेक लोग विस्थापित होकर लाजामानु में बस गए।

लाजामानु की आबादी आज सिर्फ 800 है। ऑस्ट्रेलिया के दूसरे आदिवासी समुदायों के इलाकों की तरह लाजामानु में भी लोगों की जरूरतों की पूर्ति के लिए एक ही दुकान है, जिसमें खाने-पीने की चीजों से लेकर डाइपर और वाशिंग मशीन तक सब मिलता हैं। इस दुकान में सामान की आपूर्ति सप्ताह में, तो कभी दो सप्ताह में एक बार होती है। सामान की आपूर्ति करने वाले ट्रक ड्राइवरों को उबड़-खाबड़ रास्तों और प्रतिकूल वातावरण से गुजरना पड़ता है।

जूलिया बर्गिन

लाजामानु की आबादी सिर्फ 800 है। ऑस्ट्रेलिया के दूसरे आदिवासी समुदायों के इलाकों की तरह लाजामानु में भी लोगों की जरूरतों की पूर्ति के लिए एक ही दुकान हैं।

रिकॉर्ड बारिश, तूफान व बाढ़ के कारण लाजामानु तक पहुंचने वाली इकलौती सड़क इस साल के शुरुआती कुछ महीने तक कटी रही थी। इससे लाजामानु की अकेली दुकान में खाने-पीने के सामान, पानी व दवाओं की आपूर्ति रुक गई।

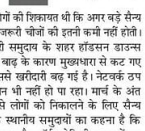

रिकॉर्ड बारिश, तूफान व बाढ़ के कारण लाजामानु तक पहुंचने वाली इकलौती सड़क इस साल के शुरुआती कुछ महीने तक कटी रही थी। इससे लाजामानु की अकेली दुकान में खाने-पीने के सामान, पानी और दवाओं की आपूर्ति रुक गई। जब हालात बेकाबू हुए, तब लाजामानु के लोग और जरूरी सामान के आपूर्तिकर्ताओं ने नॉर्दन टेरिटरी की सरकार से आपातकाल की घोषणा करने के लिए कहा। लेकिन जब ऐसा नहीं हुआ, तब स्थानीय लोगों के प्रयास से एक इंजन वाले एयर चार्टर के जरिये लाजामानु में जरूरी वस्तुओं की आपूर्ति हुई। लेकिन मांग के हिसाब से मंगाया गया सामान कम था। स्थानीय लोगों की शिकायत थी कि अगर बड़े सैन्य विमानों से सामान की आपूर्ति होती, तो दुकान में जरूरी चीजों की इतनी कमी नहीं होती।

लाजामानु से 500 मील दूर स्थानीय मिनेरी समुदाय के शहर हॉडसन डाउन्स और वहां से 750 मील दूर बोरोलूला शहर भी बाढ़ के कारण मुख्यधारा से कट गए हैं। बोरोलूला में खाद्य पदार्थों की कमी है, जिससे खरीदारी बढ़ गई है। नेटवर्क ठप हो जाने से वहां क्रेडिट कार्ड के जरिये भुगतान भी नहीं हो पा रहा। मार्च के अंत तक बाढ़ के भयावह हो जाने से बोरोलूला से लोगों को निकालने के लिए सैन्य अभियान चलाया गया। इन विभिन्न जगहों के स्थानीय समुदायों का कहना है कि विपत्ति के समय ऑस्ट्रेलिया की संघीय सरकार और नॉर्दन टेरिटरी सरकारों का रवैया निराशाजनक रहा है।

©The New York Times 2024

आंकड़े

अग्नि दुर्घटना से मौतें

देश में आग से प्रतिवर्ष हजारों लोगों को जान गंवानी पड़ती है। एनसीआरबी के मुताबिक, ऐसी घटनाएं पहले से नियंत्रित हुई हैं।

(आंकड़े जान गंवाने वालों के) | स्रोत: NCRB

धर्म ने कबूतर और अग्निदेव ने बाज का वेश धरकर उशीनर के राजा के सत्यधर्म की परीक्षा ली, तो उन्होंने अपना मांस काटकर चढ़ा दिया।

महाराज शिबि की परीक्षा

अंतर्यात्रा
संकलित

उशीनर देश के महाराज शिबि बड़े ही दयालु और धर्मात्मा थे। एक बार वह अपने महल में बैठे हुए थे, उसी समय एक कबूतर उनकी गोद में आकर गिरा। कबूतर काफी भयभीत था। वह उनकी गोद में ऐसे दुबक गया, जैसे डरा हुआ बालक अपनी मां की गोद में छिप जाता है।

कुछ ही देर बाद एक बाज आया और उसने शिबि से कहा, यह तो मेरा शिकार है। आप इसे मुक्त करें। महाराज ने कहा कि शरणागत को अरक्षित छोड़ना पाप है। बाज बोला, महाराज आप धर्मात्मा हैं। सभी प्राणियों का आप पर समान अधिकार है। जैसे इसकी रक्षा करना आपका धर्म है, वैसे ही मुझ भूखे को आहार देना भी आपका धर्म है। यह कबूतर ही मेरा आहार है, इसलिए मैं पाप नहीं कर रहा। काफी संवाद के बाद महाराज शिबि ने कहा- ठीक है। तुम्हें मांस चाहिए, तो इस कबूतर के बराबर मेरा मांस ले लो। इस पर बाज तैयार हो गया।

महाराज शिबि अपना मांस काटकर तुला में रखते जाते, लेकिन कबूतर का वजन बढ़ता जा रहा था। अंत में वह अपनी गर्दन काटने लगे, इतने में ही श्वेत कबूतर बने साक्षात धर्म उनके सामने प्रकट हो गए और बोले महाराज, मैं धर्म हूं। यह बाज अग्निदेव हैं। हम आपके सत्यधर्म की परीक्षा लेने के लिए आए थे, जिसमें आप सफल हुए। जैसा आपका यश है, वैसे ही आप सच्चे धर्मात्मा भी हैं। महाराज ने दोनों देवों की स्तुति की। वे दोनों महाराज शिबि को आशीर्वाद देकर चले गए।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 15 जनवरी, 1951

साम्राज्यवाद एशिया से बिस्तर गोल करे वर्ना यूरोप भी खतरे में

साम्राज्यवाद एशिया से बिस्तर गोल करे वर्ना यूरोप भी खतरे में

कश्मीर पर कोई फैसला न होसका

भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने पश्चिमी शक्तियों को चेतावनी दी कि साम्राज्यवादी देश अब एशिया से अपने डेरे उखाड़ लें, अन्यथा सुदूरपूर्व में शांति न हो सकेगी। यूरोप भी खतरे में है।

छोटी नदियों को जिंदा रखने की मुहिम

छोटी नदियां बड़ी नदियों के प्रवाह को बढ़ाने के साथ भूजल पुनर्भरण में सहायक हैं। छोटी नदियों का कायाकल्प समुदाय के बिना संभव नहीं है।

सुरेश भाई | जल संरक्षण

छोटी नदियों के संगम से बनी गंगा 2,550 किलोमीटर, ब्रह्मपुत्र और सिंधु भारत में क्रमशः 916 और 1,114 किलोमीटर लंबी हैं। लगभग सभी बड़ी नदियों के उद्गम ग्लेशियरों से हैं। इनके बहाव क्षेत्र में जंगल, तराई, मैदान और बीहड़ क्षेत्रों से छोटी-छोटी नदियां बड़ी नदियों में मिल रही हैं।

भारत की सबसे छोटी नदी अरवरी है, जो अरावली पर्वतमाला से निकलकर राजस्थान के अलवर जिले में बहती है। यमुना सबसे बड़ी सहायक नदी है। यमुना में भी टौंस, हिंडन, चंबल, बेतवा आदि मिलती हैं। छोटी नदियां बड़ी नदियों के प्रवाह बढ़ाने के साथ उन्हें भूजल पुनर्भरण में सक्षम बनाती हैं। मिट्टी की नमी बनाए रखती और जैव विविधता में सुधार करती हैं। सूखे और बाढ़ का सामना करने में मदद करती हैं, लेकिन सूख रही छोटी नदियों का कायाकल्प समुदाय के बिना संभव नहीं है। इन सहायक और छोटी नदियों

में निरंतर घटती जल राशि चिंता का विषय है।

ग्लेशियरों के सूखने से हिमपोषित नदियां भी सूख रही हैं। भीषण गर्मी से बुंदेलखंड की कई नदियां सूख गई हैं। गंगा-यमुना की छोटी नदियां और जल स्रोत सूख गए हैं। हर वर्ष हिमालय से लेकर मैदानों तक भारी जल सैलाब से अपार जन-धन की हानि हो रही है। बारिश के पानी को रोकने की पारंपरिक शैली को आधुनिक विकास ने रौंद डाला है, जहां तालाब, जोहड़ जैसी जल संरचनाएं होती थीं। अब उन स्थानों पर बहुमंजिला इमारतें बन गई हैं। खनन, सीमेंटेड संरचनाओं ने पूरे जल क्षेत्र की जलवायु पर विपरीत असर डाला है। भूजल बहुत नीचे चला गया है। इन चुनौतियों के बावजूद आज भी भारत के गांवों में लोग अपने पारंपरिक प्रबंधन से जल की व्यवस्था करते हैं, जिससे विवेकपूर्ण जल उपयोग को बढ़ावा मिलता है।

सक्रिय समाजसेवियों, पर्यावरणविदों और पानीदार समाज ने मिलकर ऐसे उदाहरण भी प्रस्तुत किए हैं कि सूखी छोटी नदियां फिर से बहने लगी हैं। अलवर में तरुण भारत संघ ने सूखी नदियों को जिंदा कर दिया है। लोग वहां नदियों के पुनर्जीवन के सामाजिक और पर्यावरणीय तरीके सीख रहे हैं। बुंदेलखंड में परमार्थ समाजसेवी संस्थान ने छोटी नदियों के पुनर्जीवन के लिए जोरदार अभियान चला रखा है। उन्होंने अब तक विलुप्त होती बछेड़ी, कनेरा, बारगी, खूडर, घुरारी नदी के पुनर्जीवन के लिए स्थानीय राज-समाज के साथ मिलकर महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं।

मध्य प्रदेश के खजुराहो में हाल ही में जल जन जोड़ो अभियान और परमार्थ समाजसेवी संस्थान द्वारा आयोजित एक संवाद में 15 राज्यों से 50 नदी प्रतिनिधियों ने निर्णय लिया कि 51 नदियों के पुनर्जीवन हेतु यात्रा का आयोजन होगा। जलपुरुष राजेंद्र सिंह की अगुवाई में देश भर से आए जल विशेषज्ञों ने मांग की है कि केंद्र सरकार नदियों के लिए एक स्पष्ट नदी नीति बनाए। नदियों के लिए काम करने वाले लोग मानते हैं कि छोटी नदियों का समुदाय की खाद्य सुरक्षा, उनका सम्मानजनक जीवन और उनके आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके साथ ही बड़ी नदियों के प्रवाह को बढ़ाना, भूजल का पुनर्भरण, जमीन की उपजाऊ क्षमता को बढ़ाने में भी ये मददगार होती हैं। जलवायु परिवर्तन का सीधा संबंध छोटी नदियों से है। यदि हम छोटी नदियों को जीवित कर लेंगे, तो जलवायु परिवर्तन का खतरा कम हो जाएगा। इस अभियान के राष्ट्रीय संयोजक डॉ. संजय सिंह ने कहा कि नदियों को पुनर्जीवित करने के लिए निकाली जाने वाली यात्राओं के पहले यह जरूरी है कि संबंधित नदी के बारे में सारे आंकड़े एकत्रित करने के बाद समुदाय के साथ मिलकर संवाद किया जाएगा।

प्रो. विभूति राय कहते हैं कि यदि पारंपरिक जल सुरक्षा के उपायों पर ध्यान नहीं दिया गया, तो मानव जीवन पर संकट बढ़ जाएगा। अगले 20 वर्षों में नदियां सूख जाएंगी। यदि छोटी नदियों को पुनर्जीवित करना है, तो हर क्षेत्र की जलवायु के अनुसार अलग-अलग प्लान की आवश्यकता है। शैक्षणिक पाठ्यक्रम में नदी ज्ञानतंत्र को शामिल किया जाए। डब्ल्यूएचएच भारत के प्रमुख राकेश कटल कहते हैं कि यह नदियों को बचाने की आपातकालीन स्थिति है। इसलिए देश भर में नदियों के पुनर्जीवन के लिए चिंतित समाज और पर्यावरणविद आगे आकर एक-एक नदी को पुनर्जीवित करने लिए कदम बढ़ा रहे हैं।

गरमी और संवेदना

जब गरमी चरम पर हो, तब विशेष रूप से मजदूरों व मेहनतकश लोगों की चिंता सबसे जरूरी है। इस लिहाज से दिल्ली के उप-राज्यपाल वी के सक्सेना ने जो निर्देश दिया है कि निर्माण स्थलों पर काम करने वाले मजदूरों को दोपहर 12 से 3 बजे तक सवैतनिक अवकाश दिया जाए, उसकी सराहना की जानी चाहिए। दिल्ली में जब पारा 50 डिग्री के पार चला गया हो, तब मजदूरों के अनुकूल कदम उठाना और उनसे काम लेने वालों को उदारता के लिए पाबंद करना समय की मांग है। राष्ट्रीय राजधानी में भीषण गरमी के बावजूद अनेक ऐसे क्षेत्र हैं, जहां काम नहीं रुक सकता, पर कार्य के समय को मौसम के अनुरूप बनाया जा सकता है। जहां भी मजदूरों को धूप में काम करना पड़ रहा है, वहां यह नियम लागू होना चाहिए या काम के घंटों में परिवर्तन किया जाना चाहिए। पहले के दौर में किसान सुबह छह से ग्यारह बजे तक खेतों में काम करने के बाद लौट आते थे और शाम चार बजे के बाद ही वापस खेत में काम के लिए लौटते थे। किसी काम को पूरा करने के लिए यह कतई जरूरी नहीं कि जीवन को खतरे में डाला जाए।

प्रतिकूल मौसम में मजदूरों के अनुरूप नीतियों की पालना अनिवार्य है। आमतौर पर मजदूरों के बारे में नहीं सोचा जाता है। बड़ी संख्या में मजदूर विपरीत हालात में काम करते पाए जाते हैं। उनसे काम लेने वाले उनकी सहूलियत के बारे में रत्ती भर भी नहीं सोचते हैं। आज जब भारत के एक बड़े क्षेत्र में तापमान कुछ ज्यादा ही परेशान कर रहा है, तब दिल्ली की तरह ही दूसरे राज्यों की सरकारों को भी समाधान पर गौर करना चाहिए। दिल्ली विकास प्राधिकरण ने तो अपने मातहत कार्यरत मजदूरों को दिन में तीन घंटे का ब्रेक देने संबंधी व्यवस्था को पहले ही लागू कर दिया है। खास बात यह है कि यह व्यवस्था तब तक लागू रहेगी, जब तक पारा 40 डिग्री सेल्सियस से नीचे नहीं आएगा। हालांकि, ऐसे मामलों में केवल निर्देश देना ही पर्याप्त नहीं है। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि निर्देश को सभी कंपनियां और ठेकेदार अपने दायरे में पूरी तरह से लागू करें। स्वयं मजदूरों को भी अपनी स्वास्थ्य सुरक्षा के प्रति सचेत होना चाहिए। चंद पैसों के लिए लू का शिकार होकर जीवन संकट में डालना सही नहीं है। उन्हें अपने आसपास पानी का इंतजाम भी करवाना चाहिए। अधिकारियों ने तो कागजी भलमनसाहत दिखाते हुए मजदूरों के लिए नारियल पानी तक का इंतजाम रखने के लिए कहा है, पर क्या तमाम कार्यस्थलों पर शीतल पेयजल भी उपलब्ध है? शहरों में बढ़ते तापमान से निपटने के लिए जल और छिड़काव की सबसे ज्यादा जरूरत है, पर क्या शहरों ने पर्याप्त पानी का इंतजाम कर लिया है? ऐसे इलाकों में क्या होगा, जो पेयजल के लिए भी तरस रहे हैं।

उत्तर-पश्चिम के राज्यों में भीषण गरमी के बावजूद अनेक ऐसे क्षेत्र हैं, जहां काम नहीं रुक सकता, पर कार्य के समय और परिवेश को मौसम के अनुरूप बनाया जा सकता है।

पेयजल का इंतजाम न होने की वजह से ही बिहार में अनेक स्कूलों में बच्चों के बीमार पड़ने की शिकायत सामने आई है। पहला सवाल तो यही है कि इतनी गरमी में स्कूल क्यों खुले हुए थे? जब पारा 42 के पार पहुंच जाए, तो स्कूल चलाना क्यों जरूरी है? देश में ज्यादातर स्कूल बंद हो गए हैं, तो बिहार में स्कूलों को खोलने और बच्चों को बुलाने की क्या मजबूरी थी? अगर भीषण गरमी में भी स्कूल चलाए जा रहे थे, तब उन स्कूलों में शीतल जल और बिजली से संचालित पंखों की व्यवस्था किसकी जिम्मेदारी थी? देश के जिन इलाकों में स्कूलों के पास पर्याप्त संसाधन नहीं हैं, उन्हें विशेष रूप से सतर्क रहना चाहिए, ताकि किसी भी बच्चे के बीमार पड़ने की नौबत न आए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 30 मई, 1949

हिन्दुस्तान पीछे नहीं हटेगा

श्रीनगर, २९ मई। ''हिन्दुस्तान ने काश्मीर को जो वचन दिये हैं, वे पूरे किये जायेंगे और किसी हालत में वह काश्मीर को नीचा नहीं देखने देगा'', यह घोषणा भारत के प्रधानमन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने आज सायंकाल प्रतापबाग में हुई एक विशाल सभा में भाषण देते हुए की। नेहरू जी ने कहा कि काश्मीर हिन्दुस्तान का अंग है और दुनिया की कोई ताकत उसे हिन्दुस्तान से अलग नहीं कर सकती।

आपने काश्मीरियों से कहा कि वे इस बुनियादी बात को कभी न भूलें कि पाकिस्तान ने शुरू में इस बात से बिल्कुल इन्कार किया था कि उसका काश्मीर पर किये गये हमले में कुछ भी हाथ है, मगर बाद में उसने इस बात को स्वीकार कर लिया कि काश्मीर में पाकिस्तान की फौजें लड़ रही हैं। पं. नेहरू ने कहा कि भारतीय सेना की अपार शक्ति आपको इस बात का पूरा विश्वास दिला सकती है कि दुश्मन एक इंच भी आगे नहीं बढ़ सकेगा। जहां तक रक्षा का प्रश्न है, उसे भारतीय सेना सम्हाल लेगी, मगर काश्मीरी जनता को दुश्मन के जासूसों के बारे में बहुत सतर्क रहना चाहिये, क्योंकि वे तरह-तरह की अफवाहें फैलाकर लोगों में गड़बड़ी फैलाना चाहते हैं। तजुर्बे ने भारत के लोगों को यह सिखा दिया है कि वे दूसरे पक्ष द्वारा काश्मीर तथा अन्य मामलों में दिये गये वादों पर विश्वास करना कितना खतरनाक है। काश्मीर के लोगों को भी मैं बता देना चाहता हूं कि वह दूसरे पक्ष द्वारा दिये जाने वाले झूठे वादे में कभी न फंसें।

पंडित नेहरू ने आगे कहा कि गत दो सालों में हिन्दुस्तान का नक्शा बिल्कुल बदल गया है। काश्मीर और हैदराबाद आदि लगभग आधा दर्जन बड़ी रियासतों को छोड़कर बाकी सारी छः सौ रियासतें जहां-तहां एक-दूसरी से मिला दी गई हैं। आपने कहा कि हिन्दुस्तान में स्वेच्छाचारी शासन के दिन लद गये। काश्मीर की प्रजा के लिये पाकिस्तान द्वारा अपने प्रेम की लम्बी-चौड़ी घोषणाएं करने के बावजूद इस चीज को नजरन्दाज नहीं किया जा सकता कि पाकिस्तान में जो रियासतें हैं, उनमें अभी तक वही पुराना स्वेच्छाचारी शासन चल रहा है। यही नहीं, वहां हालत पहले से बदतर हो चुकी है।... भारी करतल ध्वनि के बीच शेख अब्दुल्ला ने कहा कि हम पं. नेहरू को यह विश्वास दिलाते हैं कि काश्मीर हमेशा हिन्दुस्तान के साथ रहेगा।

झुलसाती हवाओं का बढ़ता इलाका

यहां स्कैन करें

के जे रमेश | पूर्व महानिदेशक, भारतीय मौसम विभाग

पहले झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, बिहार, बंगाल, महाराष्ट्र जैसे राज्य ही लू की चपेट में आते थे, पर अब तेलंगाना, उत्तरी कर्नाटक जैसे इलाके भी मार्च-अप्रैल से ही तपने लगे हैं।

हर साल मई के आखिरी पखवाड़े से लेकर जून के अंत तक, जब तक मानसून गंगा के मैदानी इलाकों में नहीं आ जाता, उत्तर भारत में गरमी सामान्य मौसमी परिघटना है। इन दिनों दिल्ली, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, बिहार, झारखंड, बंगाल जैसे तमाम राज्य तपते रहते हैं। यह मानसून में तेजी लाने के लिए आवश्यक भी माना जाता है, क्योंकि गरमी जितनी तेज होती है, अरब सागर से उतना ही मजबूत मानसून भारत को भिगोता है। मगर अब जरूरत से अधिक गरमी पड़ने लगी है और तापमान 50 डिग्री के पार जाने लगा है। भारत के कई शहर तो पहले से अधिक गरम हो चले हैं। आखिर क्यों?

दरअसल, इसकी बड़ी वजह जलवायु में लगातार हो रहा बदलाव है। जलवायु परिवर्तन के कारण अब हर मौसम पिछला रिकॉर्ड तोड़ता नजर आता है। इसी साल जनवरी पिछले वर्ष के जनवरी माह से अधिक गरम था। फरवरी, मार्च या अप्रैल महीने की भी यही कहानी रही। स्थिति यह है कि वैश्विक गरमी 1.2 डिग्री सेल्सियस तापमान की सीमा को पार कर चुकी है, जबकि समुद्र तटों के किनारे के देश साल 2100 तक वैश्विक गरमी को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक रोकने के हिमायती हैं। पेरिस समझौते में भी वैश्विक तापमान वृद्धि को पूर्व-औद्योगिक स्तरों से 2 डिग्री सेल्सियस कम करने पर सहमति बनी थी, लेकिन नतीजा अब भी सिफर ही दिख रहा है।

जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल (आईपीसीसी) का कहना है कि जब तापमान में 1 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी होती है, तो हीट वेव की आवृत्ति (आने की दर), समय और प्रभाव में कम से कम दोगुना का इजाफा होता है। यही कारण है कि हाल के वर्षों में हीट वेव आने की दर बढ़ गई है। पहले झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, बिहार, बंगाल, महाराष्ट्र जैसे राज्य ही इसकी चपेट में आते थे, लेकिन अब तेलंगाना, उत्तरी कर्नाटक जैसे इलाके भी मार्च-अप्रैल से ही बेहिसाब गरमी झेलने को मजबूर हैं। सरकारों ने तो पहले से ही इससे लड़ने की तैयारियां शुरू कर दी थीं।

बहरहाल, तापमान का बढ़ना और गरमी की तपन महसूस करना, दोनों अलग चीजे हैं। आपने खबरों में भी देखा होगा कि कहीं तापमान तो कम होता है, लेकिन गरमी अधिक महसूस होती है। यह काफी हद तक नमी पर निर्भर करता है। यदि वातावरण में नमी कम हो, तो शुष्क, यानी सूखी गरमी पड़ती है, जिसमें कूलर, पंखा आदि से राहत मिल जाती है। मगर जब तापमान के साथ नमी भी होती है, तो हमारे शरीर से काफी ज्यादा पसीना निकलने लगता है और 35-36 डिग्री सेल्सियस तापमान भी 40 डिग्री के समान महसूस होने लगता है। ऐसी उमस में एयर कंडिशनर ही कारगर साबित होता है। उल्लेखनीय है कि तापमान मापने का तरीका बिल्कुल सामान्य है। शहर की कुछ जगहों पर इसकी मशीनें लगाई जाती हैं, जिनमें थर्मामीटर की तरह तापमान मापने वाला यंत्र होता है। वही हवा की गति भी माप लेता है।

अभी विशेषकर उत्तर भारत में तापमान में जो उछाल दिखने को मिल रहा है, उसमें जल्द ही कुछ राहत मिल सकती है। अगले तीन-चार दिनों में जम्मू-कश्मीर में पश्चिमी विक्षोभ आ सकता है। दिल्ली-एनसीआर के कुछ इलाकों में तो बुधवार की शाम हल्की बारिश भी हुई। इस विक्षोभ से राजस्थान को छोड़कर शेष मैदानी इलाकों में कुछ राहत मिल सकती है। हालांकि, इसका असर भी तीन-चार दिनों तक ही रहेगा, फिर सूरज पहले की तरह आग बरसाने लगेगा। यह स्थिति कमोबेश मानसून आने तक बनी रहेगी।

बढ़ती गरमी मानव स्वास्थ्य को भी नुकसान पहुंचाती है। जिस तरह 98.5 फारेनहाइट तापमान के बाद शरीर में हलचल तेज हो जाती है, उसी तरह 37 डिग्री से अधिक का तापमान शरीर को बेचैन कर सकता है। इसके बाद मुख्यतः बेहतर प्रतिरोधक क्षमता ही गरमी का मुकाबला करती है। चूंकि बच्चे और बुजुर्गों में यह क्षमता कम होती है, इसलिए उनके साथ-साथ उन लोगों को भी सावधानी बरतने की सलाह दी जाती है, जो पहले से बीमार होते हैं। हालांकि, सावधानी सामान्य आदमी को भी रखनी चाहिए, क्योंकि जब तापमान 40 डिग्री सेल्सियस से ऊपर चला जाता है, तो शरीर में पानी घटने लगता है और शारीरिक क्षमता घटकर आधी रह जाती है। यही कारण है कि गरमी के महीने में पानी अधिकाधिक पीने और मौसमी फलों का सेवन करने को कहा जाता है। नारियल, खीरा, तरबूज, ककड़ी, खरबूजा जैसे फल शरीर में पानी की कमी को पूरा करने में सक्षम होते हैं।

एक यह सावधानी भी बरतने को कहा जाता है कि सुबह 11 बजे से लेकर शाम चार बजे तक धूप के 'एक्सपोजर' से बचना चाहिए। महानगरों व बड़े शहरों में राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) तमाम तरह के दिशा-निर्देश लागू करता है। जैसे, इस बार अस्पतालों को अपने 100 बेड लू के शिकार लोगों के लिए खाली रखने के निर्देश दिए जा चुके हैं। बच्चों के वार्ड अस्पताल के शीर्ष तल पर न रखने के निर्देश भी हैं, क्योंकि तेलंगाना में 2017 में कई नवजातों की हुई मौत के बाद अध्ययन में यही बात सामने आई थी कि संबंधित अस्पतालों ने नवजातों को शीर्ष तल पर रखा था, जहां गरमी तुलनात्मक रूप से अधिक थी।

इसी तरह, खुले में काम करने वाले श्रमिकों, निर्माण-कारीगरों, निगम कर्मचारी, सफाईकर्मियों, कूड़ा बीनने वालों आदि को अपना काम सुबह 10 बजे तक खत्म कर लेना चाहिए और 11 बजे से चार बजे तक खुले में काम करने से बचना चाहिए। उन कंपनियों में भी दिन में छुट्टी देने की व्यवस्था की जाती है, जहां की छत गरमी से बचने के लिए नाकाफी मानी जाती है।

सवाल है कि आखिर इस बढ़ते तापमान को रोकें कैसे? इसका एक समाधान वृक्षारोपण है। इसके लिए सरकारों को आगे आना होगा। शहर में जहां हरियाली है, वहां उसे बढ़ाने की व्यवस्था करनी होगी। पार्क में वृक्षों की सघनता बढ़ानी होगी और उनकी कटाई रोकनी होगी। तापमान कम करने के लिए पार्कों के अंदर की झीलों के आसपास भी हरियाली बढ़ानी चाहिए। बेंगलुरु, हैदराबाद में तो तापमान को नियंत्रित करने के लिए रिसाइकिल वाटर, यानी दूषित जल को इस्तेमाल के लायक बनाकर पार्कों में इस्तेमाल किया जा रहा है। जाहिर है, इस तरह के प्रयास तमाम जगहों पर करने होंगे। एक समग्र रणनीति ही बढ़ते तापमान की तपिश से हमारी सुरक्षा कर सकती है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

दक्षिण अफ्रीका में भी चुनावी जनादेश का इंतजार

यहां स्कैन करें

विवेक शुक्ला | वरिष्ठ पत्रकार

जब भारत में चुनाव समापन की ओर बढ़ चला है, तब दक्षिण अफ्रीका में भी चुनाव पूरा होने वाला है। यहां 4 जून को नतीजे आएंगे और वहां 2 जून को। दक्षिण अफ्रीका में 30 साल पहले अमानवीय रंगभेद को खत्म करने में नेल्सन मंडेला की अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस (एएनसी) की खास भूमिका थी। एएनसी तभी से सत्ता पर काबिज है। उसे वहां बसे हुए लगभग 16 लाख भारतवंशियों का भी साथ मिलता रहा है। वैसे, इस बार आशंका है कि 1994 के बाद पहली बार एएनसी बहुमत से दूर रह सकती है। वहां मिली-जुली सरकार बन सकती है। वर्तमान सरकार से वहां के भारतवंशी भी नाखुश हैं।

दक्षिण अफ्रीका में गोरों के शासन के अंत के बाद यह देश में सातवां आम चुनाव है। करीब पौने तीन करोड़ मतदाता देश की नई सरकार को चुन रहे हैं। अगर एएनसी को चुनावों में 50 फीसद से कम वोट मिले, तो पार्टी को गठबंधन सरकार बनाने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। उस हालत में एएनसी के नेता और राष्ट्रपति सिरिल रामाफोसा को मिली-जुली सरकार बनाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। बताते चलें कि रामाफोसा 2019 में भारत के गणतंत्र दिवस समारोह में मुख्य अतिथि थे। एएनसी ने 2018 में बदनाम राष्ट्रपति जैकब जुमा को हटाकर रामाफोसा को देश का राष्ट्रपति बनाया था। जैकब जुमा पर 2009 और 2018 के बीच राष्ट्रपति पद पर रहते भ्रष्टाचार के आरोप लगे थे। जुमा पर यह भी आरोप लगा था कि उन्होंने भारत के उद्योगपति 'गुप्ता ब्रदर्स' (अनिल और अजय) को खूब लाभ पहुंचाया। उत्तराखंड पुलिस ने बीते दिनों एक बड़े बिल्डर को आत्महत्या के लिए उकसाने के आरोप में गुप्ता ब्रदर्स को गिरफ्तार किया था। बेशक, एएनसी से अवाम की नाराजगी की मुख्य वजह जुमा का कुशासन था। चूंकि जुमा गुप्ता ब्रदर्स के संरक्षक माने जाते थे, इस कारण 2021 में दक्षिण अफ्रीका में भारतवंशियों पर हमले भी हुए थे। जैकब जुमा की गिरफ्तारी के बाद वहां हालात बिगड़ गए थे। भारतीय मूल के नागरिकों को जोहानिसबर्ग और क्वाजुलु नटाल में निशाना बनाया गया था।

तभी से वहां के भारतवंशी अपनी सरकार से नाराज हैं। हालांकि, एक दौर में एएनसी के प्रति भारतवंशियों के मन में गहरा प्रेम था और इसकी बड़ी वजह नेल्सन मंडेला थे। वैसे, एएनसी को 2019 के आम चुनाव में पहली बार झटका लगा था, तब पार्टी को 57.50 फीसद वोट मिले थे। इस बार वोट में गिरावट की आशंका है।

दक्षिण अफ्रीका में श्वेत शासन के अंत के बाद सातवां आम चुनाव है और पहली बार अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस कुछ मुश्किल में दिख रही है।

आज दक्षिण अफ्रीका हत्या के मामले बीते 20 साल के उच्च स्तर पर है; देश में लगभग हर 20 मिनट में एक व्यक्ति का कत्ल होता है। बेरोजगारी, बिजली व जल संकट के स्थायी हल न खोज पाने के कारण जनता एएनसी से दूर हो रही है। बहरहाल, देश की मुख्य विपक्षी पार्टी, सेंट्रिस्ट डेमोक्रेटिक अलायंस (डीए) का नेतृत्व जॉन स्टीनहुइसन करते हैं और इसे कई लोग गोरे दक्षिण अफ्रीकियों की पार्टी मानते हैं। इस चुनाव के लिए डीए ने छोटी विपक्षी पार्टियों के साथ मिलकर एक गठबंधन बनाया है। यह गठबंधन सत्ता में आ सकता है। वैसे डीए जरूरत पड़ने पर एएनसी के साथ भी जा सकता है और एएनसी भी डीए की मदद ले सकती है। एक अन्य दल इकोनॉमिक फ्रीडम फाइटर्स (ईएफएफ) भी एएनसी के साथ खड़ा हो सकता है। ईएफएफ एक वामपंथी पार्टी है, जिसका नेतृत्व जूलियस मालेमा कर रहे हैं।

भारतीय मूल के कुछ नेता भी वहां चुनाव मैदान में हैं। इनमें पैट्रिक पिल्ले शामिल हैं, जिन्होंने डेमोक्रेटिक लिबरल कांग्रेस (डीएलसी) नाम से पार्टी बनाई है। डीएलसी ने भारतीय मूल के 10 उम्मीदवार उतारे हैं। एस सिंह विपक्षी पार्टी डीए के प्रत्याशी हैं। भारतीय मूल के तीन प्रत्याशी- फसीहा हसन, मागेश्वरी गोवेंदर और शाएक इमरान सुब्रथी एएनसी के टिकट पर चुनाव लड़ रहे हैं। इनके अलावा भी कुछ भारतवंशी निर्दलीय भाग्य आजमा रहे हैं। भारतवंशियों के वहां ज्यादा संख्या में जीतने पर जाहिर है उनकी समस्याओं का समाधान होगा। दोनों देशों के बीच संबंध पुराना है और प्रगाढ़ता बढ़नी चाहिए। दोनों के बीच व्यापार भी 10 अरब डॉलर के आंकड़े को पार कर गया है। दोनों लोकतांत्रिक देशों में बेहतर सरकार और परस्पर संबंध विस्तार होना चाहिए, पर फिलहाल दोनों को चुनावी नतीजों का इंतजार है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

मर्यादा बहुत जरूरी

राम जी जब आए होंगे विजयी होकर अयोध्या में, तब कितनी भीड़ हुई होगी। आज उनका प्राणवल्लभ आया है 14 साल बाद। कितनी तड़पन होगी, कैसे लोग मिलना चाह रहे होंगे, गले लगाना चाह रहे होंगे, चरणों में लिपटना चाह रहे होंगे, क्या-क्या देना चाह रहे होंगे, क्या मर्यादित स्वरूप है। राम जी ने सबसे पहले दंडवत प्रणाम गुरु वशिष्ठ को किया। राम जी ने ब्राह्मणों को दंडवत किया। माताओं को प्रणाम किया। इसके बाद लक्ष्मण जी ने किया। फिर भरत जी ने और फिर शत्रुघ्न जी ने राम जी को प्रणाम किया। इसे क्रम में वर्णन किया गया है। इससे ज्यादा मर्यादा कहां है?

बिना मर्यादा के कुछ नहीं चलने वाला। परिवार, राज्य, राष्ट्र, कुछ और चलने वाला है क्या? सारी मर्यादाएं टूट रही हैं। आप पढ़ें, तो समझ में आएगा कि रामराज्य कैसे आता है। निश्चित रूप से इस ग्रंथ को दुनिया का संविधान होना चाहिए और आज नहीं तो कल, यह जब होगा, तभी रामराज्य आएगा। तभी यह काम बनेगा। कभी भी प्रतियोगिता होगी, तो विश्वगुरु भारत ही होगा।

यह *रामचरितमानस* का देश है। हम अपने उस पुराने स्वरूप को प्राप्त कर सकें, इसके लिए प्रयास करें। गोस्वामी जी ने कहा, रावण का इतना बड़ा ऐश्वर्य था, अब एक आदमी रोने वाला नहीं है। त्रेता में भी राम की जय-जयकार हुई और आज भी राम जी की ही जय-जयकार होती है।... गोस्वामी जी ने राम जी से कहा था, हमें कुछ नहीं चाहिए, जैसे कामी पुरुष को नारी बहुत अच्छी लगती है। वह उसको प्यार करता है। उसके लिए बड़ी भावनाएं होती हैं, लेकिन तभी तक, जब तक काम की वृत्ति मन में होती है। लोभ की जब तक वृत्ति होती है, तब तक लोभी को धन अच्छा लगता है, हमेशा नहीं अच्छा लगता। यदि काम हमेशा प्रिय होता, तो पति-पत्नी का झगड़ा नहीं होता और तलाक नहीं होता। ईश्वर सबकी आत्मा है और वह हमेशा प्रिय है, परम प्रेमास्पद है। वेदांत का सिद्धांत है- औरों से तो हम थोड़ी देर के लिए प्रेम करते हैं, मतलब से करते हैं। तुलसीदास जी ने कहा कि राम जी आप हमेशा मुझे प्रिय लगें, यही प्रार्थना है- *कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम। तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम।।*

बिना मर्यादा के कुछ नहीं चलने वाला। परिवार, राज्य, राष्ट्र, कुछ और चलने वाला है क्या? सारी मर्यादाएं टूट रही हैं। आप पढ़ें, तो समझ में आएगा कि रामराज्य कैसे आता है।

यह विकास की पराकाष्ठा है, बाकी हमें रोटी, कपड़ा तो मिलना ही मिलना है। तुलसीदास को भी मिलता ही था। तुलसीदास जी ने कहा था- *घर घर मांगे टूक पुनि भूपति पूजे पायं। जे तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय।* एक दिन तुलसी टुकड़ा मांगता था और आज राजा चरणों की धूलि के लिए लालायित है, तो हमें और आप सभी लोगों को सब कुछ इसी लोक में ही मिलेगा। हमारा धर्म ऐसा नहीं है, जो केवल परलोक की बात करता है। धर्म का तो मतलब ही है, जो अभ्युदय भी दे।

रामानंदाचार्य स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य

द्रौपदी मुर्मु | राष्ट्रपति, भारत

विश्व इतिहास के स्वर्णिम अध्याय सदैव आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित रहे हैं। इतिहास साक्षी है कि आध्यात्मिक मूल्यों का तिरस्कार करके केवल भौतिक प्रगति का मार्ग अपनाना अंततः विनाशकारी ही सिद्ध हुआ है।

अनुलोम-विलोम
हिंदी पत्रकारिता दिवस

हिंदी पत्रकारिता पर लोगों का बढ़ता विश्वास

आज, यानी 30 मई का दिन हिंदी पत्रकारों के लिए खास है। यह दिन हिंदी पत्रकारिता के नाम है। इसी दिन 1826 में 'उदन्त मार्तण्ड' नाम से हिंदी भाषा का पहला समाचार-पत्र निकाला गया था। पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने कलकत्ता (अब कोलकाता) से बतौर साप्ताहिक इसकी शुरुआत की थी। इसके प्रकाशक और संपादक वह खुद थे। स्पष्ट है, हिंदी पत्रकारिता के उद्भव और विकास में पंडित जुगल किशोर शुक्ल और 'उदन्त मार्तण्ड' का योगदान भुलाया नहीं जा सकता, और उन्हीं को सम्मान देने के लिए 30 मई को हम हिंदी पत्रकारिता दिवस मनाते हैं। विडंबना है कि इतनी लंबी विरासत के बावजूद हिंदी पत्रकारिता को लेकर कई लोग आज विलाप करते हैं। उनके मुताबिक, इसका स्तर काफी गिर गया है। आरोप है कि जिस तेवर के लिए पत्रकारिता को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है, उससे हिंदी पत्रकारिता कोसों दूर चली गई है। इतना ही नहीं, भाषा का भी पतन हुआ है और कई अंग्रेजी व उर्दू शब्दों का प्रयोग हिंदी के पत्रकार अपने लेखन में धड़ल्ले से करने लगे हैं।

इन आरोपों का कोई मतलब नहीं है। अगर हिन्दुस्तान की अन्य भाषाएं हिंदी में अपनी जगह बना रही हैं, तो इसे हिंदी की ताकत ही समझना चाहिए। वैसे भी, हिंदी एक ऐसा सागर है, जिसमें तमाम भाषाएं समा सकती हैं, समाती भी रही हैं। मसलन, देश में खड़ी हिंदी बोलने वाली आबादी भला कितनी है, लेकिन हिंदीभाषी पूरे देश में फैले हुए हैं। हिंदी पत्रकारिता का भी यही हाल है। भले ही ऐसा लग रहा है कि इसकी हैसियत कम हो गई है, लेकिन इंडियन रीडरशिप सर्वे बताता है कि देश के शीर्ष पांच दैनिक में हिंदी का ही बोलबाला है। इसका मतलब यही है कि देश में हिंदी पत्रकारिता को पसंद करने वाले लोगों की संख्या कम नहीं है। इसकी विश्वसनीयता लगातार बढ़ रही है। अंग्रेजी भाषी पत्रकारों का दायरा कथित तौर पर 'भद्र लोक' तक ही है, जबकि जबकि हिंदी पत्रकार गांव-देहात तक सुने और पढ़े जाते हैं।

रही बात इसका स्तर गिरने की, तो कुछ लोगों को हिंदी पत्रकारिता की नई प्रकृति सुहा रही है, तो कुछ इसे आलोचना की नजर से देख रहे हैं। मगर व्यापक तौर पर देखें, तो हिंदी पत्रकार सत्ता पर सवाल उठा रहे हैं और आम जनता की समस्याओं को भी राष्ट्रीय मुद्दों में जगह दिला रहे हैं। इसलिए, हिंदी पत्रकारिता को कमतर आंकना भूल है। अंग्रेजी पत्रकारिता की तुलना में यह कहीं अधिक समृद्ध और व्यापक है। दोनों भाषाओं के पाठकों और दर्शकों की संख्या में भारी अंतर इसी बात की तस्दीक करता है।

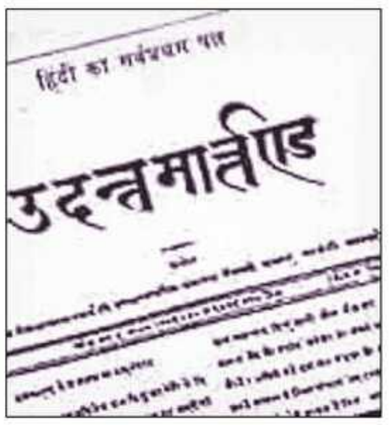

मोहित, टिप्पणीकार

विश्वसनीयता खोता लोकतंत्र का चौथा स्तंभ

प्रजातंत्र 51 और 49 का खेल मात्र नहीं है। यह असल में एक नैतिक व्यवस्था है, जिसमें प्रहरी है पत्रकारिता। इसे लोकतंत्र का चौथा स्तंभ भी कहते हैं। मगर आज पत्रकारिता खुद अपनी विश्वसनीयता के लिए जद्दोजहद कर रही है। खबरों की इस नई परिस्थिति में भारतीय मीडिया को एक नया व्याकरण गढ़ना होगा। भारतीय मीडिया अपनी सामान्य कार्यशैली भी भूल गया है। पहले मीडिया सरकारों के कामकाज पर खुद सवाल उठाया करता था, लेकिन अब प्रश्न पूछना तो दूर, यदि किसी ने सत्ता से सवाल पूछ लिया, तो कई मीडिया संस्थान खुद उसके बचाव में उतर आते हैं। अक्सर देखा गया है कि लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए किसी खास खबर को, जिसमें दर्शकों की अधिक रुचि की संभावना होती है, इतनी बार दिखाया जाता है कि वह अपना मूल स्वरूप और उद्देश्य खो बैठती है। साफ है, दुष्प्रचार और सनसनी को परोसकर कई मीडिया संस्थान अपना कारोबार कर रहे हैं। सच और सार्थकता के साथ-साथ जन-सरोकार से तो इन्होंने वर्षों पहले अपना नाता तोड़ लिया है। जाहिर है, लोकतंत्र के इस चौथे स्तंभ को खुद के बारे में चिंता और चिंतन करना चाहिए।

चतुरानन, टिप्पणीकार

भेदभाव का यह दौर

अगर मुझे जरा भी इल्म होता कि हिंदी पत्रकारिता का इस देश में इतना बुरा हाल है, तो मैं हिंदी के बजाय अंग्रेजी पत्रकारिता को चुनता। हिंदी प्रेमियों को यह बात बुरी लग सकती है, लेकिन मेरा अनुभव और इस पेशे की हकीकत जानते हुए यही सही होता। मसलन, इस देश में अंग्रेजी के पत्रकारों को हिंदीभाषी पत्रकारों की तुलना में बाहर की दुनिया में (यानी नेताओं से, मंत्रियों से, नौकरशाहों से, कॉरपोरेट हाउस से, सरकारी महकमों से) कहीं ज्यादा भाव मिलता है, जबकि हिंदी के ज्यादातर पत्रकारों की ब्रांडिंग चैनलों के उदय से पहले 'स्टेपनी' जैसी रही है। और, ये दोनों के साथ एक ही समय पर होने वाले अलग-अलग व्यवहार में साफ नजर आता है। एक ही मीडिया संस्थान में समान पदों पर एक सा काम करने वाले पत्रकारों के बीच फर्क किया जाता है। कई मीडिया संस्थानों में, जहां दोनों भाषाओं में काम होता है, वहां आज भी खास रिपोर्टिंग का असाइनमेंट आमतौर पर अंग्रेजी वालों के पास होता है। मजेदार बात यह है कि बाहर वालों के साथ-साथ अंग्रेजी के पत्रकार भी खुद को हिंदीभाषी पत्रकारों से बेहतर मानते हैं। इस सूरतेहाल में कैसे मनाएं हम हिंदी पत्रकारिता दिवस? यह सवाल आज तमाम हिंदीभाषी पत्रकारों को मथ रहा होगा!

विवेक सत्य मित्रम, टिप्पणीकार

कश्मीर में लोकतंत्र

सर्वाधिक मतदान

कश्मीर में तीन दशकों में सर्वाधिक मतदान आगामी विधानसभा चुनाव के लिए शुभ संकेत है। ऐसे समय जब पूरे देश में लोग मतदान के प्रति उत्साहित नहीं थे, कश्मीरियों ने साहस और दृढ़ता दिखाते हुए संभावित जोखिम को अनदेखा कर बड़ी संख्या में मतदान के लिए निकले। इस चुनाव में केवल कश्मीर और बंगाल में मत प्रतिशत बढ़ा है। बंगाल का मामला समझ में आता है क्योंकि यह शुरू से 'राजनीतिक' राज्य रहा है, लेकिन कश्मीर की जनता ने आम चुनाव में 2024 जैसी दिलचस्पी पहले कभी नहीं दिखाई है। नागरिक सहभागिता में इस वृद्धि का निर्वाचन आयोग ने स्वागत किया है जो आगामी विधानसभा चुनाव के लिए शुभ संकेत है। इसे राज्य में लोकतंत्र बहाली की दिशा में महत्वपूर्ण कदम के रूप में देखा जा रहा है। 5 अगस्त, 2019 को भारत सरकार ने अनुच्छेद 370 समाप्त करने की घोषणा कर दी जो जम्मू कश्मीर क्षेत्र को विशेष स्वायत्तता देता था। इसके साथ ही अनेक राजनीतिक और प्रशासनिक परिवर्तन किए गए जिसमें राज्य का दो संघशासित क्षेत्रों- जम्मू कश्मीर एवं लद्दाख में विभाजन शामिल था। इस निर्णय पर देश दुनिया में मिश्रित प्रतिक्रिया हुई जिसके कारण क्षेत्र में राजनीतिक अस्थिरता तथा सुरक्षा चिन्ताओं का एक दौर आया। इस महत्वपूर्ण संवैधानिक परिवर्तन के बाद केन्द्र सरकार ने क्षेत्र को बाकी भारत के साथ ज्यादा गहराई से एकजुट करने का प्रयास किया। इससे विकास तेज हुआ, निवेश बढ़ा तथा सामान्य स्थिति बहाल हुई। इस रणनीति का एक प्रमुख अंग स्थानीय व विधानसभा चुनावों के माध्यम से लोकतांत्रिक ढांचे की स्थापना थी। लेकिन इसमें बड़ी बाधा लोगों के प्रतिरोध तथा सिविल अधिकारियों पर उनका अविश्वास था। अब भारी संख्या में मतदान कर उन्होंने राज्य स्तर पर लोकतांत्रिक सरकार बनाने की अपनी इच्छा प्रदर्शित की है। हालिया चुनाव में तीन दशकों का

सर्वाधिक मतदान देखने में आया है जो इस प्रक्रिया में मील का महत्वपूर्ण पत्थर है। पिछले चुनावों की तुलना में मतदाताओं की सहभागिता बहुत अच्छी रही है। इससे घाटी के निवासियों का लोकतांत्रिक प्रक्रिया में पुन: विश्वास स्पष्ट होता है। यह अनुच्छेद 370 समाप्त करने के प्रति सहमति का भी संकेत है। मतदान प्रतिशत में इस वृद्धि के अनेक कारण है जिनमें सुरक्षा की स्थिति में सुधार तथा सरकारी पहलें शामिल हैं।

मतदाताओं की यह अभूतपूर्व स्थिति भावी विधानसभा चुनाव के लिए शुभ संकेत है। इस चुनाव को जम्मू कश्मीर में लोकतांत्रिक शासन की बहाली की दिशा में प्रमुख आयाम माना जाता है। मतदाताओं की अधिक सहभागिता से संकेत मिलता है कि लोग लोकतांत्रिक प्रक्रिया में हिस्सा लेने के इच्छुक हैं और उनको विश्वास है कि अब उनकी आवाज सरकार द्वारा सुनी जाएगी। उनकी सक्रिय नागरिक सहभागिता विधानसभा चुनावों की सफलता और वैधता के लिए जरूरी है। इससे व्यापकतम राजनीतिक परिवर्तनों की स्वीकार्यता भी प्रकट होती है जो अनुच्छेद 370 समाप्त करने के बाद सामने आई है। लेकिन इस सकारात्मक परिवर्तन के साथ अनेक चुनौतियां अब भी मौजूद हैं। सरकार और निर्वाचन आयोग को कुछ लोगों की शिकायतों और आकांक्षाओं पर गौर करना चाहिए ताकि लोकतांत्रिक स्वीकार्यता की गति बनाए रखी जा सके। इसके साथ ही अब निर्वाचन आयोग को सुनिश्चित करना चाहिए कि आगामी विधानसभा चुनाव स्वतंत्र, निष्पक्ष तथा पारदर्शी तरीके से हों। इसके साथ ही जम्मू कश्मीर में मतदाताओं की बढ़ी हुई सहभागिता की भावना भी बनाए रखी जानी चाहिए।

रक्षा क्षेत्र में समुचित निवेश जरूरी

भाजपा के चुनाव घोषणापत्र 'मोदी की गारंटी' में जीवन्त सुरक्षा उपायों का वादा किया गया है। लेकिन रक्षा खर्च में समुचित निवेश के बिना संभावित खतरों का सामना नहीं किया जा सकता है।

अशोक के. मेहता
(लेखक, सेवानिवृत्त मेजर जनरल हैं)

भाजपा के चुनाव घोषणापत्र 'मोदी की गारंटी' में जीवन्त सुरक्षा उपायों का वादा किया गया है। लेकिन रक्षा खर्च में समुचित निवेश के बिना संभावित खतरों का सामना नहीं किया जा सकता है। भारत के समक्ष सुरक्षा क्षेत्र में दुहरी चुनौतियां हैं जिनसे निपटने के लिए सक्रिय प्रतिरोध जरूरी है। भाजपा के रक्षा एवं राष्ट्रीय सुरक्षा घोषणापत्र का शीर्षक 'सुरक्षित भारत के लिए मोदी की गारंटी' है। इसमें रक्षा क्षेत्र में निवेश के माध्यम से सक्रिय प्रतिरोध प्राप्त करने की बात कही गई है। इसके अंतर्गत 'नमो एप' के माध्यम से आमने-सामने की होने वाली बैठकों के साथ ही लगभग 10 मिलियन समर्थकों के सुझाव प्राप्त किए गए।

चुनाव घोषणापत्र में मोदी के अनेक चित्रों के साथ मोदी की गारंटियां दी गई हैं। भाजपा बहुत सी उपलब्धियों का श्रेय लेती है जिसमें आतंकवाद का सफाया करने की बात शामिल है, हालांकि पिछले सप्ताह ही जम्मू कश्मीर में आतंकी हमले हुए हैं। वैसे सीमापार से आतंकी हमलों का लंबा दु:खद इतिहास है। 2001 में संसद पर हुआ आतंकी हमला भाजपा के शासनकाल में हुआ था, जबकि मुंबई में 2008 में हुआ भयानक आतंकी हमला संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन-संप्रग सरकार में हुआ था।

वर्ष 2001 में भारतीय जनता पार्टी ने आक्रामक राजनय के अंतर्गत 'आपरेशन पराक्रम' किया था जिसे आंशिक सफलता मिली थी। लेकिन इसके बाद 2008 में संप्रग सरकार ने रणनीतिक संयम की बात करते हुए कुछ नहीं किया। भाजपा ने 'आतंकवाद के प्रति पूर्ण असहिष्णुता' की नीति पर चलते हुए 2016 में म्यांमार और उरी में सर्जिकल स्ट्राइक तथा 2019 में बालाकोट एयर स्ट्राइक कीं। इनसे व्यापक आतंकवाद के खिलाफ प्रतिरोध पैदा हुआ। लेकिन पिछले दशक में भाजपा द्वारा आतंकी हमले न होने का दावा पूरी तरह सही नहीं है। 2014 और 2023 के बीच पठानकोट, पुलवामा और उरी के ब्रिगेड मुख्यालय पर आतंकी हमले हुए। इसी कालखंड में 2950 सिविलियन तथा सुरक्षा बलों के जवान आतंकी घटनाओं में शहीद हुए।

इसके बावजूद भाजपा की उपलब्धियां शानदार रहीं। इनमें अनुच्छेद 370 समाप्त करना, वामपंथी उग्रवाद में 52 प्रतिशत कमी तथा गृह मंत्री अमित शाह द्वारा अगले तीन साल में इसकी पूर्ण समाप्ति का वादा शामिल हैं। पूर्वोत्तर में विद्रोह की घटनाओं में लगभग 73 प्रतिशत कमी आई है, लेकिन इसमें मणिपुर का कोई उल्लेख नहीं है जहां हिंसा लगभग एक साल से जारी है तथा दो स्थानों पर पुन: मतदान के आदेश देने पड़े हैं। मणिपुर सरकार के लिए परेशानी का कारण बना हुआ है जहां विद्रोही गतिविधियां फिर सिर उठा रही हैं। भारत-म्यांमार सीमा पर हिंसक स्थिति है क्योंकि म्यांमार में सैनिक शासक विद्रोहियों के मुकाबले हार रहे हैं।

इससे म्यांमार पूर्वोत्तर में सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर सकता है। प्रमुख रक्षा अध्यक्ष-सीडीएस की नियुक्ति को एक उपलब्धि की तरह पेश करते हुए भाजपा ने जल्द ही सेना में थियेटर प्रक्रिया पूर्ण करने पर जोर दिया है। इसके साथ ही उत्तरी सीमा पर ढांचागत विकास के साथ ही हिंद महासागर क्षेत्र में नौसेना को मजबूत किया गया है। 'रक्षा विनिर्माण तथा आत्मनिर्भरता' को भारत को वैश्विक विनिर्माण केन्द्र के रूप में विकसित करने की दिशा में प्रमुख स्थान दिया गया है। 'दुहरे खतरों' की बात करते हुए चीन या पाकिस्तान का कोई विशेष उल्लेख नहीं किया गया है। विपक्ष ने सरकार पर पूर्वी लद्दाख में क्षेत्र खोने का आरोप लगाया है, लेकिन सरकार ने इसका पूर्णत: खंडन किया है। भारत और चीन के बीच सीमा समस्या का समाधान कठिन जरूर है, पर यह असंभव नहीं है। अनेक सेना प्रमुखों ने 20 अप्रैल, 2020 की यथास्थिति बहाल करने की बात कही है, पर यह वर्तमान समय में कठिन काम लगता है। कुछ सैन्य विशेषज्ञों के अनुसार सशस्त्र बलों को अभी भी समुचित राजनीतिक निर्देशों का अभाव है। हालांकि, रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने इसी महीने स्पष्ट किया है कि जल्द ही सेना के थियेटरीकरण का काम पूरा कर लिया जाएगा।

अभी अनेक मामलों में सीडीएस की आपरेशनल भूमिका पर पूर्ण सहमति नहीं है जिनमें संसाधनों का आबंटन, सेना प्रमुखों की जॉब प्रोफाइल, थियेटर कमांडर नियुक्त होने पर उनकी स्थिति तथा आपरेशन कमांड और थियेटर कमांडरों के बीच नियंत्रण की स्थिति के बारे में काम हो रहा है। इसके लिए रक्षा मंत्री, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार तथा सीडीएस के बीच समन्वय जरूरी होगा। समान रूप से महत्वपूर्ण है कि राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार-एनएसए अजीत डोवाल और राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद सचिवालय को राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को अद्यतन बनाना होगा जिसे इंटीग्रेटेड डिफेंस स्टाफ ने 2021 में तैयार किया था। सरकार को अभी परस्पर जुड़े दो मुद्दों-थियेटराइजेशन तथा एनएसएस पर और ज्यादा गंभीरता से विचार करना होगा। अनुमान है कि यह काम भाजपा की तीसरी सरकार में एक साल में हो जाएगा। संप्रग सरकार में एनएसएस तीन बार बनाया गया था। सर्वाधिक चिन्ता की बात है कि भाजपा के 2024 के घोषणापत्र में रक्षा खर्च पर चुप्पी बनाए रखी गई है। दूसरी ओर कांग्रेस ने अपने घोषणापत्र में कहा है कि वह रक्षा खर्च में कमी नहीं आने देगी तथा समुचित बजट आबंटित करेगी।

विडंबना है कि किसी सरकार ने रक्षा खर्च में आवश्यकताओं को देखते हुए समुचित वृद्धि नहीं की है। रक्षा आबंटन 1980 के दशक में 3.5 प्रतिशत था। उस समय मैं डिफेंस प्लानिंग स्टाफ का सदस्य था। लेकिन उसके बाद यह गिर कर जीडीपी का 2 प्रतिशत रह गया है, जबकि जीडीपी में काफी वृद्धि हुई है। 'सिपरी' की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार भारत का रक्षा बजट 84 बिलियन डालर है, जबकि चीन का 296 बिलियन डालर। 2024-25 में रक्षा आबंटन में 4.7 प्रतिशत वृद्धि हुई है, लेकिन यह 2020-21 को छोड़ कर दस साल में सबसे कम है, जब यह जीडीपी का 1.45 प्रतिशत था। जीडीपी प्रतिशत के रूप में खर्च कभी जीडीपी के 2 प्रतिशत तक भी नहीं पहुंचा, जबकि दो पूर्ण युद्धों के साथ ही अनेक झड़पें हो चुकी हैं। आधुनिकीकरण के लिए पूंजीगत बजट बहुत कम है। 2015-16 में मांगी व आबंटित धनराशि के बीच 16,446 करोड़ का अंतर था, जबकि 2022-23 में यह बढ़ कर 63,328 करोड़ हो गया। सरकारी अधिकारी हमेशा से यह बहाना बनाते रहे हैं कि रक्षा बल आबंटित धनराशि खर्च नहीं कर पाते हैं। एक दशक पहले वित्त सलाहकार रहे अमित काउशिश ने कहा था कि जीडीपी के 1.9 प्रतिशत का अर्थ वर्तमान बजट में सरकारी खर्च का 13 प्रतिशत होगा। वर्तमान समय में भू-राजनीतिक स्थितियों तथा चीन की बढ़ती आक्रामकता को देखते हुए भारत का रक्षा बजट जीडीपी का कम से कम 3 प्रतिशत होना चाहिए। इतने रक्षा बजट के साथ ही हम चीन की सैनिक क्षमता का मुकाबला करने में सफल हो सकते हैं।

इस तथ्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि वर्तमान समय में सारी दुनिया रक्षा पर भारी खर्च कर रही है तथा रक्षा क्षेत्र में निवेश लगातार बढ़ रहा है। वर्तमान समय में 31 नाटो देशों ने अपनी जीडीपी का 2 प्रतिशत रक्षा पर खर्च का वादा किया है। ब्रिटेन ने 2027 तक रक्षा पर जीडीपी का 2.5 प्रतिशत खर्च की प्रतिबद्धता जताई है। यहां तक कि 'शांतिवादी' कहे जाने वाले जापान ने भी रक्षा खर्च पर 1 प्रतिशत की संवैधानिक बाध्यता को किनारे छोड़ कर 2027 तक जीडीपी का 2.5 प्रतिशत खर्च का वादा किया है। इसके साथ ही वह रक्षा और प्रतिरोधक क्षमतायें बढ़ाने के एि 315 बिलियन डालर निवेश करेगा।

भारत को अपने रक्षा खर्च में सेना के थियेटरीकरण तथा अन्य संबंधित सुधारों पर होने वाले खर्च को भी पूंजीगत खर्च में जोड़ना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को नई सरकार बनने पर चीन को हतोत्साहित करने तथा देश की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए रक्षा खर्च को जीडीपी का कम से कम 2 प्रतिशत और संभव हो तो 2.5 प्रतिशत तक बढ़ाने का प्रयास करना होगा। इससे विदेश मंत्री एस. जयशंकर द्वारा परिभाषित 'दुहरे खतरे' का सामना करने के लिए मजबूत मोर्चा बनेगा। वर्तमान समय में मोदी का यह लोकप्रिय कथन ज्यादा प्रभावी नहीं लगता है कि 'यह युग युद्ध का नहीं है।'

मानव जीवन पर भारी पड़ती लापरवाही

घाटकोपर त्रासदी भविष्य में व्यावसायिक लोभ से प्रेरित दुर्घटनाएं रोकने के लिए सख्त सुरक्षा उपायों और जवाबदेही की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करती है

सिद्धार्थ मिश्रा
(लेखक, दिल्ली विवि में वरिष्ठ सह प्रोफेसर हैं)

मानवीय लापरवाही से जुड़ी एक बड़ी मानवीय त्रासदी में 13 मई को मुंबई के उपनगर घाटकोपर में पेट्रोल पंप पर होर्डिंग गिरने से 16 मासूम लोगों की जान चली गई और करीब 75 लोग घायल हो गए। अनुमान है कि होर्डिंग की नींव कमजोर थी और शायद उस दिन चल रही तेज हवाओं के कारण होर्डिंग गिर गई और पास के पेट्रोल पंप पर मौजूद कई लोगों को अपनी चपेट में ले लिया। पता चला है कि होर्डिंग बृहन्मुंबई नगर निगम (बीएमसी) द्वारा स्वीकृत आकार से तीन गुना बड़ा था और सरकारी रेलवे पुलिस (जीआरपी) की जमीन पर लगा था। जिस विज्ञापन पैनल ने होर्डिंग को पकड़ा था, वह ईगो मीडिया का था जिसके मालिक भावेश भिंडे को इस सिलसिले में गुरुवार को गिरफ्तार किया गया। अगर कानूनी मानदंडों का पालन सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई होती तो यह घटना नहीं होती। किसी व्यक्ति को पहुंचाई गई कोई भी क्षति या नुकसान, स्वाभाविक रूप से किसी तरह की लापरवाही या मानवीय लापरवाही की चिंता पैदा करता है। यह स्पष्ट है कि इसमें कुछ लापरवाही शामिल थी और कानूनी मानदंडों का उल्लंघन किया गया था। इस तरह के खतरनाक विज्ञापन पैनल लगाने वाले लोगों के साथ-साथ स्थानीय अधिकारियों की ओर से भी लापरवाही बरती गई।

यहाँ स्वाभाविक प्रश्न यह है कि कंपनी को प्रासंगिक मानदंडों का उल्लंघन करते हुए मानव जीवन के लिए खतरा पैदा करने वाले विज्ञापन पैनल लगाने की अनुमति क्यों दी गई और संबंधित अधिकारियों द्वारा समय रहते ऐसे खतरनाक पैनल को हटाने के लिए कोई कार्रवाई क्यों नहीं की गई। सार्वजनिक सड़क पर इस पैनल को लगाने वाली कंपनी के मालिकों और कर्मचारियों की स्पष्ट लापरवाही है, क्योंकि उन्हें उचित रूप से पता था कि अगर सावधानी नहीं बरती गई तो इस तरह के पैनल से नुकसान या चोट लग सकती है। लेकिन स्थानीय अधिकारियों की भी स्पष्ट लापरवाही है, जिनकी जवाबदेही तय की जानी चाहिए क्योंकि उनकी जिम्मेदारी शहर की सड़कों पर नजर रखना और जहां भी आवश्यक हो, दुर्घटनाओं और क्षति को रोकने के लिए त्वरित कार्रवाई करना है। इस विशेष मामले में भी, कर्तव्य के उल्लंघन और लापरवाही के प्रति स्पष्ट उदासीनता है, जैसा कि भारत में सरकारी अधिकारियों के साथ-साथ आम लोगों में उदासीनता और सुस्ती के सामान्य रवैये से स्पष्ट है। इस घटना ने भारतीय शहरों में दोषपूर्ण शहरी शासन से जुड़े कई सवाल खड़े किए हैं और साथ ही हमारे देश में मानव जीवन के प्रति सामान्य उदासीनता को भी उजागर किया है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि घाटकोपर की घटना एक दुर्घटना थी और सावधानियों के बावजूद दुर्घटनाएँ होती रहती हैं और ये सबसे विकसित देशों में भी होती हैं। लेकिन भारत में मृत्यु, चोट और क्षति पहुँचाने वाली घटनाएँ और दुर्घटनाएँ किसी भी अन्य देश की तुलना में कहीं ज़्यादा हैं।

राष्ट्रीय समाचार पत्र सड़क दुर्घटनाओं, कुत्तों के हमले, आग लगने की घटनाओं, नदियों, झीलों और स्विमिंग पूल में डूबने या चिकित्सा प्रक्रियाओं सहित कई अन्य स्थितियों में लापरवाही के कारण होने वाली मौतों, चोटों और क्षति की खबरों से भरे पड़े हैं। आश्चर्य की बात यह है कि ऐसी खबरों पर जनता की कोई खास प्रतिक्रिया नहीं होती और केवल कुछ समय के लिए बड़े मामलों में कुछ हो-हल्ला होता है जिसे धीरे-धीरे भुला दिया जाता है। सरकारी अधिकारी भी ऐसी घटनाओं से ज़्यादा परेशान नहीं दिखते और वे भी जनता के आक्रोश को शांत करने के लिए कुछ समय के लिए प्रतिक्रिया देते हैं।

यहाँ जो बात हैरान करने वाली है वह यह है कि दुर्भाग्य से इतने सारे मासूम और कीमती जीवन कैसे चले गए और इसका उनके परिवार के सदस्यों पर क्या असर पड़ा होगा। मरने वालों में से कई लोग परिवार के अकेले कमाने वाले रहे होंगे जिनकी आय पर परिवार निर्भर रहा होगा। अपनों की अप्रत्याशित मौत और जो बच गए, उनके घायल होने से उन्हें बहुत बड़ा सदमा लगा होगा और उनके रिश्तेदारों और घायलों के मन पर अमिट छाप छोड़ी होगी, जो उनके लिए जीवन भर दर्द का कारण बनी रहेगी। रिश्तेदारों के साथ-साथ आय के स्रोत का नुकसान इस त्रासदी को टूटे हुए और दुखी परिवार के सदस्यों के लिए दोहरी मुसीबत में बदल देगा। कोई भी जागरूक दिमाग और संवेदनशील दिल वाला व्यक्ति, जो भारत में लगातार हो रही मानवीय त्रासदियों को देख रहा है, स्वाभाविक रूप से यह सोचकर कांप उठता है कि क्या इस देश में मानव जीवन की सुरक्षा या मूल्य की कोई गारंटी है।

घाटकोपर त्रासदी जैसी अन्य घटनाएं फिर से सोचने पर मजबूर करती हैं कि क्या इस देश में हर व्यक्ति इतना असुरक्षित और कमजोर है कि उसके साथ कभी भी और कहीं भी कुछ भी हो सकता है और दूसरों की लापरवाही और मानव जीवन के प्रति उदासीन रवैये के कारण उसके साथ दुर्घटना होने की हमेशा संभावना बनी रहती है।

इस निराशाजनक माहौल ने लेखक को एक मित्र के बेटे का कथन याद दिलाया जो बहुत पहले इंग्लैंड में पढ़ने गया था। जब उससे भारत और इंग्लैंड के बीच जीवन में अंतर के बारे में पूछा गया, तो उसने दुख से कहा कि इंग्लैंड में लोग अपने जानवरों को भी मरने नहीं देते और उनकी जान बचाने के लिए हर हद तक जाते हैं, लेकिन भारत में हम देखते हैं कि लोग नियमित रूप से जानवरों की तरह मर रहे हैं, सरकार या लोगों द्वारा कोई दया नहीं दिखाई जाती। उम्मीद है कि घाटकोपर की घटना चिंता को बढ़ाएगी और सरकार और लोगों को अधिक सावधान और जिम्मेदार बनाएगी और हमारे देश में कीमती मानव जीवन को बचाने के लिए देखभाल और मानव जीवन के लिए मूल्य का एक सामान्य माहौल कायम होगा।

आप की बात

मोदी का चुनाव प्रचार

2024 लोकसभा का चुनाव प्रचार अभूतपूर्व रहा है। भाजपा के चुनाव प्रबंधन की कमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपने हाथ में ले रखी है। उन्होंने 200 से अधिक चुनावी रैलियों व 20 से अधिक टीवी साक्षात्कारों से अपने जीवट का प्रमाण दे दिया। उन्होंने एनडीए के घटक दलों के लिए प्रचार किया है। इतने व्यापक और युद्धस्तर पर चुनाव प्रबंधन की जिम्मेदारी शायद इससे पहले किसी प्रधानमंत्री ने न ली होगी। इस बार संभवत: उन्होंने 2014 व 2019 की तुलना में भी अधिक सक्रियता दिखाई है। देखना होगा कि भाजपा नीत राजग 400 का आंकड़ा पार करेगा या नहीं। विपक्षी दलों के चुनाव प्रचार के केन्द्र में भी मोदी ही रहे हैं। दावे तो विपक्ष ने भी 4 जून को मोदी की विदाई के किए हैं। लेकिन शेयर बाजार, प्रशांत किशोर जैसे रणनीतिकारों तथा अनेक अन्य संकेतों से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी तीसरी बार अपनी सरकार बनाने जा रहे हैं। मोदी के चुनाव प्रचार की शैली कुछ आलोचनाओं के बावजूद इतनी आक्रामक रही कि कांग्रेस समेत विपक्ष को रक्षात्मक रुख अपनाना पड़ा। इस प्रकार पूरा चुनाव मोदी-समर्थन और मोदी-विरोध में बंट गया। एक प्रकार से राजनीति अब कांग्रेस-केन्द्रित से भाजपा या मोदी-केन्द्रित होती जा रही है। इसके प्रभावों पर गंभीर मंथन की जरूरत होगी।

– **वीरेन्द्र कुमार जाटव,** दिल्ली

बौखलाया विपक्ष

कांग्रेस नेता प्रियंका गांधी वाड्रा ने हिमाचल प्रदेश में एक रैली में कहा कि मोदी चोरों की तरह सरकार गिराते हैं और वे अपने आपको देवता समान समझते हैं। उनका यह बयान विपक्ष की बौखलाहट का प्रतीक है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने याद दिलाया कि मुझे गन्दी नाली का कीड़ा तक कहा, 24 साल में मुझे विपक्ष ने इतनी गालियां दी कि मैं गाली प्रूफ हो गया। गालियां खाने के बाद भी मोदी संवेदनशील रहे। वे विपक्ष की गालियों की नकारात्मकता से मुक्ति पाने के लिए पहले 2019 में केदारनाथ गए थे और अब वे ध्यान लगाने कन्याकुमारी जाने वाले हैं। पिछले 10 वर्ष में उन्होंने देश के वफादार चौकीदार का दायित्व ईमानदारी से निभाया और बहुत से घोटालेबाजों, चोरों और देश को चूना लगाने वालों को जेल भेज दिया। मोदी ने भ्रष्टाचारियों से जब्त धन को गरीबों के कल्याण में लगाया। मोदी ने वादा किया है कि 4 जून के बाद भ्रष्टाचारियों के खिलाफ और कठोर कार्रवाई होगी। विपक्षी नेता इससे और बौखला गए हैं। केजरीवाल तो 2 जून को जेल जाएंगे ही, कई अन्य नेताओं का भी नंबर लगने वाला है। देश की जनता इससे बहुत प्रसन्न है। उसे भ्रष्टाचारियों तथा गरीबों का पैसा लूटने वालों से कोई हमदर्दी नहीं है।

– **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

माओवादियों की धमकी

छत्तीसगढ़ के 72 साल के मांझी 20 साल की उम्र से जड़ी-बूटियों के सहारे आदिवासियों का इलाज करते रहे हैं लेकिन माओवादियों की ओर से लगातार मिलती धमकियों से तंग आकर उन्होंने अपना काम बंद करने का फैसला किया है। पिछले महीने ही मांझी को पद्मश्री से सम्मानित किया गया था। यह अत्यन्त निंदनीय घटना है। निस्वार्थ इलाज करने वाले इस वैद्य ने अपनी पूरी उम्र आदिवासियों की सेवा में लगा दी और सरकार ने उनको सम्मानित करते हुए पद्म श्री अवार्ड दिया। वैद्य जी ने इतने वर्षों में जिनका इलाज किया, उनमें माओवादी भी हो सकते हैं। यदि माओवादियों की धमकियों से उन्हें अपना कार्य बंद करना पड़ा है तो यह शासन-प्रशासन के लिए शर्म की बात है। न केवल राज्य सरकार, बल्कि केन्द्र सरकार को भी इस मामले पर तत्काल ध्यान देना चाहिए। वैद्य जी को समुचित सुरक्षा उपलब्ध कराने के साथ ही धमकी देने वालों का समूल सफाया होना चाहिए। यह प्रकरण राज्य में कुछ महीने पहले बनी भाजपा सरकार तथा केन्द्रीय गृह मंत्री के लिए चुनौती का विषय है जो माओवादियों के सफाए की प्रतिबद्धता जता रहे हैं। यह माओवादियों के दिमागी दीवालियेपन का भी उदाहरण है जिससे जनता में उनके प्रति घृणा और बढ़ेगी।

सुभाष बुडावन वाला, रतलाम

रईसी का उत्तराधिकारी

ईरानी राष्ट्रपति इब्राहीम रईसी की हेलिकॉप्टर दुर्घटना में अकाल मौत ने ईरान व पश्चिम एशिया की राजनीतिक स्थिति में अनिश्चितता पैदा की है। इसराइल-हमास युद्ध में रईसी की कूटनीति सफल रही थी और वे अमेरिका से भी संतुलन बनाए रख सके थे। ईरान को अब रईसी का उत्तराधिकारी चुनना है। ईरानी परमाणु कार्यक्रम चालू रखने के लिए कुछ नरम प्रवृत्ति वाले मध्यमार्गी नेता को उत्तराधिकारी बनाना ईरान और दुनिया के लिए अच्छा रहेगा। रईसी के सबसे कट्टर विरोधी ईरान में ही हैं। इनमें रईसी के शिकार बने उदारवादी, लोकतांत्रिक व वामपंथी नेता तथा अनेक महिलायें शामिल हैं जो इस्लामवादी कट्टरपंथियों का विरोध करती रही हैं। ईरान में इस्लामी कट्टरपंथ के उभार के लिए पश्चिम भी कम जिम्मेदार नहीं है। जब सुरक्षा परिषद के सभी स्थाई सदस्यों ने अमेरिका-ईरान नाभिकीय समझौते की गारंटी दी थी, तब इसे रद्द करना अमेरिका के लिए किसी प्रकार उचित नहीं था। विडंबना है कि एक समय यह समझौता करवाने वाली डेमोक्रेटिक पार्टी नेता व राष्ट्रपति बाइडेन ने भी इसे बहाल करने के कदम नहीं उठाए।

– **विभूति बुपक्या,** खाचरोद

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।